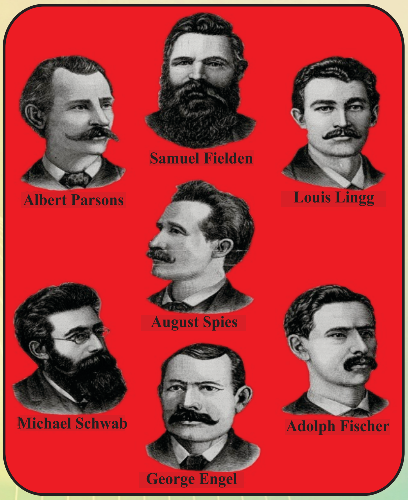
वैज्ञानिक चिंतन की आवाज़

तर्कशील पथ

TARKSHEEL PATH

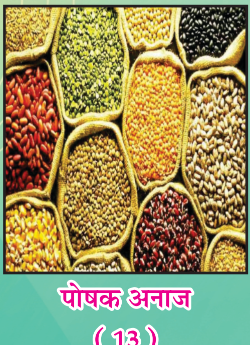
मई 2023



शिकागो के शहीद (2)



क्रांतिकारी मन्मथनाथ गुप्त (28)



पोषक अनाज (13)

30/-



महान वैज्ञानिक कापरनिकस (42)



सम्प्रदायिक दंगे (44)

अच्छी चीजों में से सबसे अच्छी चीज केवल ज्ञान है, और बुरी से बुरी चीजों में सबसे बुरी चीज अज्ञान है। -- सुकरात (ग्रीक दार्शनिक)

रात को रात कहना जरूरी है

– डा. रामकुमार आत्रेय

जो लोग
अंधेरे को अंधेरा
और रात की रात कहने से डरते हैं
स्वाभाविक मौत मरने से पहले
रोज रोज हजार मौत मरते हैं।
जिंदगी जो
रोज रोज मरती रही हो
और फिर भी
मौत से डरती रही हो
मौत उसको
स्वाभाविक हो ही नहीं सकती
इसलिए आज
अधिकतर लोग
अस्वाभाविक मौत मर रहे हैं
जैसे पौधों पर खिले फूल
मुरझाने से पहले ही जर रहे हैं।
सूरज को सूरज नहीं कहोगे
तो कोई बात नहीं
मगर रात को रात
और अंधेरे को
अंधेरा कहना जरूरी है
नहीं तो रोशनी से
जिंदगी का विश्वास उठ जाएगा
एक दूसरे के बीच बना
आपसी विश्वास का पुल टूट जाएगा
तब अंधेरा नाचने लगेगा
व्यंग्य से मुस्कुराएगा
आस्था के फूलों से दुर्गंध आने लगेगो
और मौत हर जगह मंडराने लगेगी।

मुख्य संपादक
बलबीर लौंगोवाल
balbirlongowal1966@gmail.com
98153 17028

संपादक
प्रा बलवंत सिंह
tarksheeleditor@gmail.com
94163 24802

विदेशी प्रतिनिद्धि
अवतार गिल, कनेडा
अछर सिंह खरलवीर, कवैंटरी (इंगलैंड)
(+44 748 635 1185)
मा. भजन सिंह कनेडा, बलदेव रहिपा, टोरांटो

पत्रिका शुल्क :–
वार्षिक : 150/– रू.
विदेश : वार्षिक : 40 यू.एस.डॉलर
रचनाएं, पत्र व्यवहार व शुल्क भेजने के लिए पताः
मुख्य कार्यालय
तर्कशील भवन, संघेडा बाईपास
तर्कशील चौंक, बरनाला–148101
01679–241466, 98769 53561
tarkshiloffice@gmail.com
पत्रिका को पढ़ने के लिए लॉग ऑन करें:
www.tarksheel.org
Tarksheel Mobile App :
Readwhere.com

प्रा. बलवंत सिंह, प्रकाशक, मुद्रक, स्वामी, संपादक, मकान न. 1062, आदर्श नगर, पिपली, जिला कुरूक्षेत्र-136131 (हरियाणा) द्वारा अप्पू आर्ट प्रैस, शाहकोट से मुद्रित करके तर्कशील सोसायटी पंजाब व हरियाणा के माध्यम से वितरण हेतु जारी किया।

तर्कशील पथ पत्रिका हेतु शुल्क
पंजाब नैशनल बैंक में
तर्कशील सोसायटी पंजाब (रजि.) के नाम से
खाता सं. 0044000100282234
IFSC: PUNB0004400
में जमा करा सकते है।
एंव पत्रिका भेजने के लिए एड्रेस व शुल्क की स्क्रीन शॉट/रसीद मोबाइल नम्बर +91 98156 70725 पर वट्सएप कर दें।

इस अंक में

1. संपादकीय 1
2. शिकागो के शहीद 2
3. क्यों अभिभूत होते हैं लोग तंत्र मंत्र से 5
4. दिमागी गुलामी 8
5. बच्चों के लिए अर्थशास्त्र 11
6. पोषक अनाज 13
7. विज्ञान वरदान या अभिशाप (कविता) 16
8. नई शिक्षा नीति 2020 18
9. लड़कियों की भानमती 23
10. क्रांतीकारी मन्मथनाथ गुप्त 28
11. रौशनी के बीजों की तलाश 31
12. केस रिपोर्ट 36
13. मेरे साथ जो हुआ 40
14. महान वैज्ञानिक कापरनिकस 42
15. साम्प्रदायिक दंगे और भारतीय पुलिस 44
16. चर्च में बाल यौन शोषण 46
17. सरगर्मियां 47

आनलाईन पत्रिका को पढ़ने के लिए:

www.tarksheel.org, http://tarksheelblog.wordpress.com

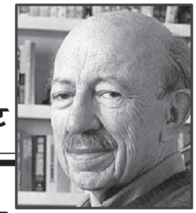
Tarksheel on Mobile App: Readwhere.com

संपादकीय

2014 में सत्तासीन सरकार ने सत्ता में आने के बाद से यह तीसरी बार है कि स्कूली पाठयक्रम में इतिहास की किताबों के साथ अपने सांप्रदायिक एजेंडे के अनुरूप छेड़छाड़ की गई है। देश की संसद में बिना किसी बहस के लाई गई शिक्षा नीति-2020 जहां शिक्षा की दिशा को पूरी तरह से केंद्रीकृत, निजीकृत, निगमित करने को तैयार है वहीं अप्रत्यक्ष रूप से शिक्षा के पूर्ण भगवाकरण की हिमायत भी करती है. एनसीईआरटी ने (नेशनल काउंसिल ऑफ एजुकेशनल रिसर्च एंड ट्रेनिंग) पिछले कुछ दिनों में विभिन्न स्कूली कक्षाओं के इतिहास के पाठ्यक्रम से मुस्लिम सुल्तानों, मुगल बादशाहों, औद्योगिक क्रांति, लोकतंत्र की चुनौतियों, लोकतंत्र और विविधता के पाठों को चुपचाप हटा दिया गया है। इस संस्था का कहना है कि ये बदलाव छात्रों पर बोझ कम करने के लिए किए गए हैं, लेकिन बदलाव की दिशा दिखा कुछ और ही रही है जबकि इतिहास की प्रत्येक घटना को पढ़ाने का अर्थ उससे सहमत होना नहीं होता है, अपितु उसे सार्थक चर्चा, वैज्ञानिक विश्लेषण के लिए संवाद निर्मित करने की दृष्टि से विद्यार्थियों के ज्ञान चक्र में शामिल करना होता है। इसे हटाना घोर अलोकतांत्रिक कार्य है। जातिवाद और जातिवाद के बारे में जो समाज मे उपलब्ध है उस सामग्री को भी हटा दिया गया है। महात्मा गांधी की हत्या का देश में साम्प्रदायिक स्थिति पर असर विषय को 12वीं क्लास की पॉलिटिकल साइंस की किताब से हटा दिया गया है, साथ ही महात्मा गांधी की हिंदू-मुस्लिम एकता की अवधारणा ने जिस तरह से हिंदू कट्टरपंथियों को उकसाया था और आरएसएस (राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ) पर भारत सरकार का प्रतिबंध आदि जैसे महत्वपूर्ण हिस्सों को भी हटा दिया गया है। कक्षा 11वीं की राजनीति विज्ञान की किताब से स्वतंत्रता सेनानी मौलाना आजाद से जुड़ी सामग्री भी हटा दी गई है. इतिहास की 12वीं क्लास की किताब 'थीम्स इन इंडियन हिस्ट्री वॉल्यूम 3' से गोडसे के एक सांप्रदायिक पत्र के संपादक होने के तथ्य को हटा दिया गया है। इससे पहले भी जून में गुजरात दंगे, मुगल दरबार, इमरजेंसी, कोल्ड वॉर, नक्सली आंदोलन आदि से जुड़ी धाराएं हटाई गई थीं। 2017 में 182 पाठ्यपुस्तकों में 1334 बदलाव किए गए। राजाओं/शासकों के कारनामों का वर्णन करने वाली पुस्तकें, पाठ इतिहास नहीं है, मजदूर वर्ग को अपने बेहतर जीवन के लिए संघर्ष इतिहास के निर्माण में निर्णायक तत्व होते हैं। केवल संकीर्ण धार्मिक सोच के चश्मे से अतीत को देखना भविष्य को गहरे रसातल में फेंकना है। इन परिवर्तनों का न केवल जनहितैषी हलकों द्वारा पुरजोर विरोध किया जाना चाहिए, बल्कि यह एक सामाजिक जिम्मेदारी भी है कि इतिहास के सत्य पूर्ण तथ्यों को इतिहास के समानांतर वैकल्पिक रूप में ले जाया जाना आवश्यक है।

इतिहास को कूड़ेदान में में डालने की कोशिश करने वालों को एक दिन स्वयं कूड़ेदान में जाना होता है यह एक ऐतिहासिक तथ्य है।

शिकागो के शहीद



हावर्ड फास्ट

अपने संघर्ष के दौरान मज़दूर वर्ग ने बहुत-से नायक पैदा किये हैं। अल्बर्ट पार्सन्स, आगस्ट स्पाइस, एडालफ फिशर और जॉर्ज इंजिल भी मज़दूरों के ऐसे ही नायक हैं। शिकागो के इन शहीद मज़दूर नेताओं को आम मेहनतकश जनता के हक़ों की आवाज़ उठाने और 'आठ घण्टे के काम के दिन' की माँग को लेकर मेहनतकशों की अगुवाई करने के कारण 11 नवम्बर, 1887 को शिकागो में फाँसी दे दी गयी।



मुट्ठीभर थैलीशाह अपनी मर्ज़ी से मज़दूरों के ख़ून की एक-एक बूँद निचोड़कर अपने ऐशो-आराम के समान जुटा रहे थे। मज़दूरों से चौदह-चौदह, सोलह-सोलह घण्टे काम लिया जाता था। दुनियाभर में अलग-अलग जगहों पर दिन में आठ घण्टे काम कराये जाने की माँग को लेकर आन्दोलन हो रहे थे। 'आठ घण्टे के काम के दिन' को लेकर शिकागो शहर की मुख्य सड़क मिशिगन एवेन्यू पर अल्बर्ट पार्सन्स के नेतृत्व में मज़दूरों ने एक शानदार जुलूस निकाला।

दूसरी तरफ़, मज़दूरों की बढ़ती ताक़त और उनके नेताओं के अडिग संकल्प से डरे हुए उद्योगपति, फैक्टरी मालिक उन पर हमला करने और मज़दूर नेताओं की हत्या कर देने की घात में थे। उन्होंने पुलिस और पिंकरटन एजेंसी के गुण्डों को मज़दूरों पर हमला करने के लिए तैयार रखा था।

तालाबन्दी के खिलाफ़ ओर आठ घण्टे के काम के दिन की माँग को लेकर हड़ताल कर रहे निहत्थे मज़दूरों पर पुलिस ने गोलियाँ चलाई जिसमें चार मज़दूर मारे गये। इस बर्बर दमन के विरोध में हे मार्केट चौक पर एक जनसभा रखी गयी। इस शान्तिपूर्ण जनसभा को करीब 180 पुलिसवालों ने घेर लिया और किसी के इशारे पर एक बम फटा जिसमें एक पुलिसवाला मारा गया और पाँच घायल हुए। फिर क्या था, पगलायी पुलिस ने अन्धाधुन्ध गोलियाँ चलानी शुरू कर दी। इस गोलाबारी में छह मज़दूरों की मौत हो गयी और 200 से ज़्यादा घायल हो गये।

अखबारों और मालिकों ने जुझारू मज़दूरों और उनके नेताओं के खिलाफ़ अन्धाधुन्ध प्रचार किया और उन्हें पकड़ने का अभियान छेड़ दिया गया। कुछ ही दिनों में सात नेता-स्पाइस, फ़ील्डेन, माइकेल श्वाब, एडॉल्फ़ फ़िशर, जॉर्ज एंजिल, लुइस लिंग्ग ओर ऑस्कर नीबे को गिरफ़्तार कर लिया गया। पार्सन्स को पुलिस नहीं पकड़ पायी लेकिन मुक़दमे वाले दिन वे ख़ुद ही अपने मजदूर साथियों के साथ कटघरे में खड़े होने के लिए अदालत पहुँच गये।

जिस तरह से मुक़दमा चला उससे बिल्कुल साफ़ था कि मालिकों और सरकार ने हर कीमत पर मज़दूर नेताओं को फँसाने की ठान ली है। सरकारी पक्ष ऐसा कोई सबूत नहीं पेश कर पाया कि उन आठ लोगों में से किसी ने भी बम फेंका है या उनमें से कोई भी बम फेंकने की साज़िश में शामिल था। नीबे के अलावा बाकी सबको मौत की सजा सुनायी गयी। बाद में फ़ील्डेन और श्वाब की मौत की सजा को आजीवन कारावास में बदल दिया गया। इक्कीस साल के लिंग्ग ने अपने मुँह में डायनामाइट का विस्फोट करके जल्लाद को यह मौका नहीं दिया कि उसे फाँसी पर चढ़ा सके। शेष चार, अल्बर्ट पार्सन्स, स्पाइस, एंजिल और फ़िशर को 11 नवम्बर, 1887 को फाँसी दे दी गयी।

छह वर्ष बाद, इलिनॉय राज्य के गवर्नर जॉन एल्टजेल्ड ने नीबे, फ़ील्डेन और श्वाब का आजाद कर

दिया और मौत की सजा पाने वाले पाँचों लोगों को मरने के बाद बरी करते हुए यह बताया कि उनके खिलाफ़ पेश किये गये ज्यादातर सबूत फ़र्ज़ी थे और मुक़दमा एक नाटक था।

पार्सन्स भले ही आज जीवित न हो, पर अगली पीढ़ियों को दिया गया उसका सन्देश और उसके विचार हमेशा जीवित रहेंगे। पार्सन्स के साथ ही फाँसी पर चढ़ाये गये उनके एक साथी स्पाइस ने लूट पर टिकी मानवद्रोही व्यवस्था के नुमाइन्दों को जो चेतावनी दी थी उसकी गूँज आज भी मद्धिम नहीं पड़ी है। उसने कहा था :

''अगर तुम सोचते हो कि हमें फाँसी पर लटकाकर तुम मज़दूर आन्दोलन को.........गरीबी और बदहाली में कमरतोड़ मेहनत करने वाले लाखों लोगों के आन्दोलन को कुचल डालोगे, अगर तुम्हारी यही राय है-तो खुशी से हमें फाँसी दे दो। लेकिन याद रखो...........आज तुम एक चिंगारी को कुचल रहे हो लेकिन यहाँ-वहाँ, तुम्हारे पीछे, तुम्हारे सामने, हर ओर लपटें भड़क उठेंगी। यह जंगल की आग है। तुम इसे कभी भी बुझा नहीं पाओगे। ....एक दिन आयेगा जब हमारी ख़ामोशी उन आवाज़ों से ज़्यादा ताक़तवर साबित होगी जिनका तुम आज गला घोंट रहे हो!''

शिकागो के शहीद मज़दूर नेता

''हमारी मौत दीवार पर लिखी ऐसी इबारत बन जायेगी जो नफ़रत, बैर, ढोंग-पाखण्ड, अदालत के हाथों होने वाली हत्या, अत्याचार और इन्सान के हाथों इन्सान की गुलामी के अन्त की भविष्यवाणी करेगी। दुनियाभर के दबे-कुचले लोग अपनी कानूनी बेड़ियों में कसमसा रहे हैं। विराट मज़दूर वर्ग जाग रहा है। गहरी नींद से जागी हुई जनता अपनी जंजीरों को इस तरह तोड़ फेंकेगी जैसे तूफ़ान में नरकुल टूट जाते हैं।'' **– अल्बर्ट पार्सन्स**

''एक दिन आयेगा जब हमारी ख़ामोशी उन आवाज़ों से ज़्यादा ताक़तवर साबित होगी जिनका तुम आज गला घोंट रहे हो!'' **– आगस्ट स्पाइस**

''फिशर इन्सानियत की मुक्ति के लिए अपनी जान की कुर्बानी देने की इच्छा रखता था और उसे उम्मीद थी कि ऐसा ही होगा। उसे मज़दूर वर्ग की हालत में थोड़े बहुत सुधार करने वाले उपायों पर जरा भी भरोसा नहीं था। ''

विलियम होल्म्स

''एंजिल मज़दूर वर्ग के संघर्ष का एक बहादुर सिपाही था। वह मेहनतकशों की मुक्ति के लक्ष्य के लिए जीजान लड़ा देने वाला बागी था।'' **ऑस्कर नीबे**

स्रोतः पुस्तक 'शिकागो के शहीद मज़दूर नेताओ की कहानी' .. हावर्ड फास्ट

अल्र्बट पार्सन्स का जेल की काल कोठरी से अपने बच्चों के नाम पत्र

मेरे प्यारे बच्चो,

अल्बर्ट आर. पार्सन्स (जूनियर) मेरी बेटी लुलु एडा पार्सन्स,

मैं ये शब्द लिख रहा हूँ और मेरे आँसू तुम्हारा नाम मिटा रहे हैं। हम फिर कभी नहीं मिलेंगे। मेरे प्यारे बच्चों, तुम्हारा पिता तुम्हें बहुत प्यार करता है। अपने प्रियजनों के प्रति अपने प्यार को हम उनके लिए जीकर प्रदर्शित करते हैं और जब आवश्यकता होती है तो उनके लिए मर कर भी। मेरे जीवन और मेरी अस्वाभाविक और क्रूर मृत्यु के बारे में तुम दूसरे लोगों से जान लोगे। तुम्हारे पिता ने स्वाधीनता और प्रसन्नता की वेदी पर अपनी बलि दी है। तुम्हारे लिए मैं एक ईमानदारी और कर्तव्यपालन की विरासत छोड़े जा रहा हूँ। इसे बनाये रखना और इसी रास्ते पर आगे बढ़ना। अपने प्रति सच्चे बनना, तभी तुम किसी दूसरे के प्रति भी कभी दोषी नहीं हो पाओगे। मेहनती, गम्भीर और हँसमुख बनना। और तुम्हारी माँ! वह बहुत महान है। उसे प्यार करना, उसका आदर करना और उसकी बात मानना।

मेरे बच्चो! मेरे प्यारो! मैं आग्रह करता हूँ कि इस विदाई सन्देश को मेरी हरेक बरसी पर पढ़ना, और मुझमें एक ऐसे इन्सान को याद करना जो सिर्फ तुम लोगों के लिए ही नहीं बल्कि भविष्य की आने वाली पीढ़ियों के लिए कुरबान हुआ।

खुश रहो, मेरे प्यारो! विदा!

तुम्हारा पिता
अल्बर्ट आर. पार्सन्स

पत्नी के नाम अल्बर्ट पार्सन्स का ख़त

कुक काउण्टी बास्तीय जेल, कोठरी नं, 29
शिकागो, 20 अगस्त, 1886

मेरी प्रिय पत्नी :

आज सुबह हमारे बारे में हुए फैसले से पूरी दुनिया के अत्याचारियों में खुशी छा गयी है और शिकागो से लेकर सेण्ट पीटर्सबर्ग तक के पूँजीपति आज दावतों में शराब की नदियाँ बहायेंगे। लेकिन, हमारी मोत दीवार पर लिखी ऐसी इबारत बन जायेगी जो नफ़रत, बैर, ढोंग-पाखण्ड, अदालत के हाथों होने वाली हत्या, अत्याचार ओर इन्सान के हाथों इन्सान की ग़ुलामी के अन्त की भविष्यवाणी करेगी। दुनियाभर के दबे-कुचले लोग अपनी क़ानूनी बेड़ियों में कमसमा रहे हैं। विराट मज़दूर वर्ग जाग रहा है। गहरी नींद से जागी हुई जनता अपनी ज़ंजीरों को इस तरह तोड़ फेंकेगी जैसे तूफ़ान में नरकुल टूट जाते हैं।

हम सब परिस्थितियों के वश में होते हैं। हम वैसे ही हैं जो परिस्थितियों ने हमें बनाया। यह सच दिन-ब-दिन साफ़ होता जा रहा है।

ऐसा कोई सबूत नहीं था कि जिन आठ लोगों को मौत की सज़ा सुनायी गयी है उनमें से किसी को भी हे मार्केट की घटना की जानकारी थी, या उसने इसकी सलाह दी या इसे भड़काया। लेकिन इससे क्या फ़र्क़ पड़ता है। सुविधाभोगी वर्ग को एक शिकार चाहिए था, और करोड़पतियों की पाग़ल भीड़ की ख़ून की प्यासी चीख़-पुकार को शान्त करने के लिए हमारी बलि चढ़ायी जा रही है क्योंकि हमारी जान से कम किसी चीज़ से वे सन्तुष्ट नहीं होंगे। आज एकाधिकारी पूजीपतियों की जीत हुई है! ज़ंजीर में जकड़ा मज़दूर फासी के फन्दे पर चढ़ रहा है क्योंकि उसने आज़ादी और हक़ के लिए आवाज़ उठाने की हिम्मत की है।

मेरी प्रिय पत्नी, मुझे तुम्हारे लिए और हमारे छोटे-छोटे बच्चों के लिए अफ़सोस है। मैं तुम्हें जनता को सौंपता हूं, क्योंकि तुम आम लोगों में से ही एक हो। तुमसे मेरा एक अनुरोध है-मेरे न रहने पर तुम जल्दबाज़ी में कोई काम नहीं करना, पर समाजवाद के महान आदर्शों को में जहाँ छोड़ जाने को बाध्य हो रहा है, तुम उन्हें और ऊँचा उठाना।

मेरे बच्चों को बताना कि उनके पिता ने एक ऐसे समाज में, जहाँ दस में से नौ बच्चों को गुलामी और ग़रीबी में जीवन बिताना पड़ता है, सन्तोष के साथ जीवन बिताने के बजाय उनके लिए आज़ादी और खुशी लाने का प्रयास करते हुए मरना बेहतर समझा। बेचारे छौने, मैं उनसे बेहद प्यार करता हूँ।

आह, मेरी प्यारी, मैं चाहे रहूँ या न रहूँ, हम एक हैं। तुम्हारे लिए, जनता और मानवता के लिए मेरी प्यार हमेशा बना रहेगा। अपनी इस कालकोठरी से मैं बार-बार आवाज़ लगाता हूँ : आज़ादी! इन्साफ़! बराबरी!

''अगर किसी देश को बर्बाद करना हो तो वहां के लोगों को धर्म के नाम पर आपस में लड़ा दो, वह देश अपने आप बर्बाद हो जाएगा।''

- लियो तालस्ताय

हज़ार साल पुराना है उनका गुस्सा
हज़ार साल पुरानी है उनकी नफ़रत
मैं तो सिर्फ
उनके बिखरे हुए शब्दों को
लय और तुक के साथ लौटा रहा हूं
मग़र तुम्हें डर है कि
आग भड़का रहा हूं!

- गोरख पाण्डेय

दरवाजा और सन्नाटा

दरवाजा खटखटाता रहूँगा मैं
जब तक अंदर का इंसान
बढ़कर तोड़ न दे ये दरवाजा
और कर न ले
खुद को आजाद
इस मिरीचिका से
जिसमें रहते हुए
उसके हिस्से में आया
अंधेरा और सन्नाटा
सिर्फ अंधेरा और सन्नाटा!

- डा. पंकज गर्ग

क्यों अभिभूत होते हैं लोग तंत्रमंत्र से

– ब्रज गोपाल राय ''चंचल''

हमारे दूर के रिश्ते की चाची काफी दिनों से बीमार थीं। उन की बीमारी कुछ अजीब सी थी। जब उनकी उम्र लगभग 45 वर्ष होने को आई तो उन्हें दौरा सा पड़ने लगा। वह जोरों से हांफने लगतीं, उनके हृदय की गति तेज हो जाती और वह अर्धमूर्च्छित अवस्था में आकर ऊलजलूल बोलना शुरू कर देती।

उनका एक जवान बेटा 18 वर्ष की उम्र में मर गया था, इसलिए कई बार वह उस बेटे का नाम लेकर अनाप–शनाप बोलने लगतीं। कई बार ऐसा होता कि उनकी आवाज पुरूषों की तरह हो जाती।

एक बार ऐसे ही दौरे के समय उन्होंने अपनी जेठानी को गंदी–गंदी गालियां दे डालीं। उन पर यह असर लगभग आधा घंटे से 2 घंटे तक रहता। इसके बाद वह धीरे धीरे सो जातीं और जागने पर उन्हें यह सब कुछ याद नहीं रहता था।

हमारे चाचा जी थोड़ा अंधविश्वासी और धर्मभीरु व्यक्ति हैं, उन्होंने शुरू–शुरू में तो इसे कोई रोग समझा, लेकिन बाद में वह इसे 'ऊपरी साया' या 'भूतप्रेत' का चक्कर समझने लगे। 'भूत बाधा' समझने के पीछे एक कारण यह भी था कि एम.बी.बी.एस. स्तर के डाक्टरों की समझ में भी चाची का रोग नहीं आया। वे कभी उच्च रक्तचाप, कभी मानसिक तनाव बताते, दवाओं से वह ठीक नहीं हो रही थी और धीरे धीरे उन के दौरों की संख्या बढ़ने लगी।

कई लोगों ने सलाह दी कि उन्हें पागलखाने ले जाया जाए, लेकिन समस्या यह थी कि दौरों के बाद वह बिल्कुल सामान्य हो जातीं और उन में पागलपन का एक प्रतिशत अंश भी कहीं नजर नहीं आता था। हमारे चाचा जी इस से बड़े परेशान रहने लगे।

हार कर वह उन्हें एक तांत्रिक के पास ले गए। तांत्रिक ने अपना जोड़बाकी लगा कर बताया कि चाची पर उन के ही बेटे की 'आत्मा' असर दिखा रही है। बहरहाल, उसने तंत्रमंत्र, पूजा पाठ शुरू किया। घर में कई बार हवन, यज्ञ भी कराया। घर में चाची के मृत पुत्र का जो भी सामान था, जैसे कपड़े, किताबें, घड़ी, मेज कुरसी आदि उन्हें उसने बाहर फिंकवा दिया।

मौका मेल की बात यह रही कि चाची धीरे धीरे ठीक होने लगीं। तीन चार महीने में ही उन के दौरों की संख्या बिलकुल घट गई। अब वह बिलकुल स्वस्थ हैं, वह तांत्रिक की परम भक्त हो गई हैं और हमारे चाचा जी तो तांत्रिक को सर्वशक्तिमान मानने लगे हैं। हम जब शुरूशुरू में तंत्र मंत्र की ढोंग पाखंड बताते थे तो चाचा जी चुप रह जाते थे। अब जब चाची ठीक हो गई हैं तो वह हमें चिढ़ाते हुए कहते हैं, ''तुम सब वैज्ञानिकता का पाखंड करते हो, तंत्रमंत्र में आज भी शक्ति है। भूतप्रेत और आत्मा का अस्तित्व भी होता है, वरना बताओ तंत्रमंत्र से तुम्हारी चाची क्यों ठीक हो गई?''

आप के पासपड़ोस में ऐसे अनेक व्यक्ति हमारे चाचा जी की तरह उपर्युक्त बात कहते मिल जाएंगे। लेकिन यह नहीं कहा जा सकता कि तंत्र मंत्र में कोई शक्ति होती है या तांत्रिकों के पास कोई शक्ति या सिद्धि होती है अथवा भूत, प्रेत, आत्मा का कोई अस्तित्व है।

सवाल उठता है कि फिर दोनों बातें एक साथ सत्य कैसे हो सकती हैं? इस बात को समझने के लिए सबसे पहले हमें यह समझना होगा कि तंत्रमंत्र से ये लोग ठीक कैसे हो गए?

यद्यपि यह विषय बहुत लंबा है, अतएव स्थानाभाव के कारण हम इसे सिर्फ दो मुद्दों–डाक्टरों द्वारा नकारे गए रोगियों का तंत्रमंत्र द्वारा सफल इलाज तथा कुछ अन्य लाभ जैसे व्यापार, संतानप्राप्ति आदि के विषय तक सीमित रखेंगे। सर्वप्रथम हम रोगों का विश्लेषण करेंगे।

तंत्रमंत्र और मनोरोग

तंत्रमंत्र के जरिए कथित 'ठीक' होने वाले 99 प्रतिशत रोगी मनोरोगी होते हैं। वैज्ञानिकों के अनुसार लगभग 400 प्रकार के मनोरोग होते हैं, जिन में साधारण 'सनक' से ले कर पूर्ण 'पागलपन' तक के रोग शामिल हैं। इन्हें 'फोबिया'

कहा जाता है।

कुछ वैज्ञानिकों का तो यहां तक कहना है कि मनोरोग अनंत हैं और लगभग प्रत्येक व्यक्ति एक विशेष अर्थ में मनोरोगी है। मान लीजिए, किसी व्यक्ति को कुत्ते से बहुत डर लगता है, तो यह एक विशेष प्रकार का मनोरोग है। यदि कोई व्यक्ति बहुत सुस्त, बहुत चुस्त, बहुत बातूनी या बहुत गंभीर है, तो यह भी मनोरोग है, अपने ऐसे लोग देखे होगें जो शराब पीते हैं, लेकिन प्याज नहीं खाते। किसी एक विशेष दिन जैसे मंगलवार को शराब, मांस से परहेज करने वाले हजारों लोग हैं? वे इसे भले ही 'श्रद्धा' या 'आस्था' की बात कहें, किंतु वैज्ञानिक दृष्टि से यह मनोविकार ही है, यदि मंगलवार को शराब न पीने वाला शराब पी ले तो वह स्वयं को अपराधबोध से ग्रस्त समझने लगेगा। उसकी यह अपराधबोधता सामान्य मनोविकार से बढ़कर पागलपन तक जा सकती है। यह सिर्फ इस बात पर निर्भर है कि वह व्यक्ति अपने विश्वास या आस्था के प्रति कितना अंधभक्त या कट्टर है।

वर्ष 1989 में दिल्ली में एक व्यक्ति ने काली की मूर्ति के आगे अपनी जीभ काट कर चढ़ा दी। वैज्ञानिक दृष्टि से वह व्यक्ति मनोरोगी था। अपने रोग के कारण वह उन्माद की ऐसी अवस्था में जा पहुंचा था। अंधविश्वासी लोग उसके इस कृत्य को भले ही उसकी 'आस्था' कहें।

एक अत्यंत महत्वपूर्ण बात यह है कि तंत्रमंत्र के जरिए रोगों के उपचार की प्रथा हजारों वर्ष पुरानी है। सारे विश्व में यह प्रथा रही है। एक अवैज्ञानिक कबीलाई समाज से हम सभी का समाज विकसित हुआ है। अतः यह ऐतिहासिक सत्य भी है। इसीलिए हमारे वैदिक, धार्मिक तथा आयुर्वेदिक ग्रंथों में तंत्र मंत्र संबंधी बातों का उल्लेख भी है। पंरतु मनोरोगों के विषय में आधुनिकतम खोज या उस क्रमबद्ध वैज्ञानिक अध्ययन का विषय 18 वीं शती से ही शुरू हुआ है। वास्तव में ऐसे अध्ययन के जनक सिगमंड फ्रायड नामक प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक ही थे।

सर्वप्रथम फ्रायड और उनके बाद अनुवर्ती वैज्ञानिकों ने यह सिद्ध किया कि मानव मन के तीन धरातल होते हैं– चेतन, अचेतन तथा अवचेतन।

मन तीन प्रकार के कार्य भी करता है। इच्छाओं का निर्माण, नियंत्रण और संतुष्टि। पहला काम भोगाश्रित मन का है, दूसरा नैतिक मन का, तीसरा काम अहंकार का। इच्छाओं का जन्म अचेतन मन में होता है। उनका नियंत्रण अवचेतन मन करता है। उन की संतुष्टि चेतन स्तर पर होती है। मनुष्य के भोगेच्छुक मन तथा नैतिक मन में संघर्ष अवचेतन मन में चलता रहता है। तब वह चाहे जितना दुखदायक हो, पर 'रोग' का रूप या उसका कारण नहीं बनता, परंतु जब इच्छा को प्रत्यनपूर्वक कठोरता से, नैतिक मन द्वारा दबा दिया जाता है, तब यह संघर्ष अचेतन मन में होने लगता है। यह संघर्ष ही मानसिक रोग हैं। क्योंकि मानव की इच्छाएं भी तो सैकड़ों हैं, इसीलिए सैकड़ों प्रकार की बीमारियों के रूप हमें देखने को मिलते हैं।

इस प्रकार के संघर्ष से व्यक्ति को मुक्त करने की प्रक्रिया उस की 'मानसिक चिकित्सा' कहलाती है। फ्रायड की परंपरा के मनश्चिकित्सक इसके लिए रोगी को पहले 'शिथिल' करते हैं। उससे अपने बुरे, कटु अनुभवों, इच्छाओं का वर्णन करने के लिए कहा जाता है जरूरत पड़ने पर उस की 'संतुष्टि' भी की जाती है।

एक पुरूष को भ्रम हो गया कि उसके पेट में गर्भ है, पुरूष के पेट में भला बच्चा कैसे हो सकता है? लेकिन मनश्चिकित्सक ने उसके सामने स्वीकार किया कि हां, वास्तव में ही उसके पेट में बच्चा है, उसके लिए बाकायदा 'प्रसव' का इंतजाम किया गया और फिर एक नवजात शिशु लाकर उसे दिखाया गया कि उस ने इस बच्चे को जन्म दिया है। वह रोगी इस बात से खुश हो गया।

फिर उसे यह बताया गया कि शिशु मर गया, इस पर वह रोने लगा। बच्चे को जन्म देने की 'खुशी' तथा मृत्यु के 'दुख' ने उसकी सारी कुंठा निकाल दी। वह कुछ समय बाद बिलकुल ठीक हो गया। 4–5 वर्ष बाद जब उसी डाक्टर ने उसे सारा किस्सा बताया तो वह 'मरीज' भी जी खोल कर हंसा।

अब कुछ मानसिक चिकित्सक 'शिथिलीकरण' के लिए 'सम्मोहन' का प्रयोग करते हैं। कहीं कहीं यह कारगर भी हुआ है। मन में अचेतन स्तर पर होने वाले संघर्ष को जब वह 'चित्ररूप' या 'भावरूप' में देख लेता है या अनुभव कर लेता है तो उस का 'रेचन' हो जाता है और वह ठीक हो जाता है।

रोगी को शिथिल करने के लिए फ्रायड की परंपरा

के लोग दवाएं देते हैं, खासतौर से नींद की गोलियां। क्योंकि रोगी का रोग महज 'मानसिक संघर्ष' के कारण है। यदि वह अवचेतन स्तर पर भी सो सके, तो उस की थकावट कम हो जाती है। कुछ डाक्टर इसके लिए बिजली के झटके भी लगाते हैं।

एक मनश्चिकित्सक डा. युंग का कहना है, ''रोग मनुष्य को आराम की आवश्यकता दर्शाने के लिए आता है।'' जटिल मनोरोगी को जब बिजली के झटके दिए जाते हैं या इंसुलिन के इंजेक्शन दिए जाते हैं तो उसके शरीर में ऐंठन होने लगती है। उसकी तोड़फोड़, मारपीट की प्रवृत्ति शांत हो जाती है या फिर वह अपनी क्रियाओं से (जैसे चीख कर, चिल्ला कर या जो कुछ भी वह कर सकता है) अपनी भावनाओं का 'रेचन' (या उनकी संतुष्टि) कर लेता है। फिर वह लंबे समय तक आराम करता है और फिर धीरे धीरे ठीक हो जाता है।

आमतौर पर भारतीय आस्तिक होते हैं। उन का भूतप्रेत, पुनर्जन्म, आत्मा, परमात्मा, चुड़ैल, डाइन, जादू, गंडा ताबीज, टोना टोटका आदि में विश्वास होता है। सामान्य या असामान्य मनोरोगों को भी वे इन्हीं सब चीजों से जोड़ लेते है। इसके अलावा तांत्रिकों का अपना एक रहस्यमय सा संसार होता है। उनकी अजीबोगरीब वेशभूषा होती है। तांत्रिकों का कमरा या आश्रम की अजोबीगरीब वस्तुओं जैसे उल्लू का पुतला, शेर, चीते के पंजे, लोबान, धूप अगरबत्ती की खुशबू, सिंदूर, रोली, रूद्राक्ष की माला, शंख, तरह तरह की हड्डियों, खोपड़ियों आदि से भरा रहता है।

उनकी क्रियाएं भी अजीब होती है। जैसे, किसी को मंत्र पढ़कर कागज के टुकड़े पर अजीबोगरीब आकृति का मंत्र लिखकर दे दिया, तो किसी भो भूभत। किसी को झाड़ू से 'झाड़ा' लगा दिया, तो किसी को कौए या मोर के पंख से। यानी कोई भी ऐसा नाटक, जो अजीब सा लगता है रोगी को घर, परिवार, मां-बाप, समाज तथा धर्मग्रंथों से चूंकि संस्कार भी ऐसे मिले होते हैं, इसलिए इन क्रियाओं के अंधविश्वास से उस का 'रेचन' हो जाता है और इसी लिए वह 'ठीक' भी हो जाता है।

कई बार ऐसा होता है कि लंबे समय तक डाक्टरों की दवा खातेखाते जब वह 'ठीक' होने की दशा तक पहुंचता है, तब तक वह ऊब कर तांत्रिक की शरण में पहुंच जाता है। ऐसी स्थिति में जब वह ठीक हो जाता तो सारा श्रय तंत्रमंत्र या तांत्रिक को मिल जाता है। जो लोग ऐसे तंत्रोपचार से 'ठीक' हो चुके होते हैं, वे भी मरीज को दिलासा दिलाते हैं, उससे भी उसे आत्मिक बल मिलता है।

कहने का आशय यह है कि व्यक्ति तंत्रमंत्र, तांत्रिक शक्ति या तांत्रिक की कथित 'सिद्धि' से ठीक नहीं होता, वह उस के क्रियाकलाप, उसके पाखंडभरे व्यक्तित्व तथा तंत्र के प्रति अपार अंधविश्वास के कारण कथित ठीक होता है। वास्तव में न तो तंत्रमंत्र में शक्ति होती है, न तांत्रिकों के पास कोई कथित सिद्धि होती है। संसार में मंत्र शक्ति, सिद्धि या अलौकिक साधना जैसे कोई चीज वस्तुत: है ही नहीं। यदि ऐसा कुछ होता तो फिर तांत्रिकों के यहां से कोई भी निराश क्यों लौटता?

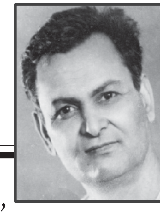
जहां तक उद्योग व्यापार, प्रतियोगिता, विवाह आदि में सफलता की बात है, यह सब 'तुक्का' लगने वाली बात है। तांत्रिक से भभूत दे दिया कि व्यापार चलेगा। चल गया तो तांत्रिक की जय जयकार हो गई। न चला तो तांत्रिक कह सकता है, ''मैं क्या कर सकता हूं, 'भाग्य' और 'ईश्वर' की मरजी के आगे में भी तो विवश हूं।'' इन मामलों में यदि सफलता मिलती है तो सिर्फ संयोगवश, पुत्रप्राप्ति, खोया धन वापस मिलना, बाहर गए व्यक्ति का लौटना, पत्पित्नी की कलह मिटना, परीक्षा में उत्तीर्ण होना, मनचाहा विवाह, वशीकरण, मारण-ये सब तंत्रमंत्र की दुकान चलाने के पाखंड हैं, तंत्रमंत्र से इनमें कुछ भी चमत्कार नहीं किया जा सकता।

मनुष्य अनेक समस्याओं से परेशान रहता है। चिंताएं कभी कभी मनुष्य को अत्याधिक उद्विग्न कर देती हैं और मनुष्य असामान्य हरकतें करने लगता है। उस समय किसी तंत्र क्रिया से व्यक्ति का रेचन हो जाए तो उस सफलता का श्रेय तंत्र की शक्ति को देना गलत है।

प्रकारांतर से, ये ही वे कारण हैं जिन से लोग तंत्र मंत्र के प्रति आकर्षित व अभिभूत होते हैं। तंत्रमंत्र स्वयं में कोई विद्या या शक्ति नहीं है। उसकी नींव अंधविश्वास है और उसका महल अज्ञान। यही कारण है कि तमाम पाखंडों के विरोध एवं भंडाफोड़ के बावजूद देश में तांत्रिकों की संख्या बढ़ती जा रही है।

(स्रोत पुस्तक ''तंत्र मंत्र यंत्र'', संपादक : राकेश नाथ)

दिमागी गुलामी



– राहुल सांकृत्यायन

जिस जाति की सभ्यता जितनी पुरानी होती है, उसकी मानसिक दासता के बन्धन भी उतने ही अधिक होते हैं। भारत की सभ्यता पुरानी है, इसमें तो शक ही नहीं और इसलिए इसके आगे बढ़ने के रास्ते में रुकावटें भी अधिक हैं। मानसिक दासता प्रगति में सबसे अधिक बाधक होती है।

हमारे कष्ट, हमारी आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक समस्याएँ इतनी अधिक और इतनी जटिल हैं कि हम तब तक उनका कोई हल सोच नहीं सकते जब तक कि हम साफ–साफ और स्वतंत्रता पूर्वक इन पर सोचने का प्रयत्न न करें। वर्तमान शताब्दी के आरम्भ में भारत में राष्ट्रीयता की बाढ़–सी आ गई, कम से कम तरुण शिक्षितों में। यह राष्ट्रीयता बहुत अंशों में श्लाघ्य रहने पर भी कितने ही अंशों में आंधी राष्ट्रीयता थी।

झूठ–सच जिस तरीके से भी हो, अपने देश के इतिहास को सबसे अधिक निर्दोष और गौरवशाली सिद्ध करने अर्थात् अपने ऋषि–मुनियों, लेखकों और विचारकों, राजाओं और राज–संस्थाओं में बीसवीं शताब्दी की बड़ी से बड़ी राजनैतिक महत्व की चीजों को देखना हमारी इस राष्ट्रीयता का एक अंग था। अपने भारत को प्राचीन भारत और उसके निवासियों को हमेशा से दुनिया के सभी राष्ट्रों से ऊपर साबित करने की दुर्भावना से प्रेरित हो हम जो कुछ भी अनाप–शनाप ऐतिहासिक खोज के नाम पर लिखें।

इन भलेमानसों के ख्याल में आता है कि अगर किसी तरह से हम अपनी सभ्यता, अपनी पुस्तकों और अपने ऋषि–मुनियों को दुनिया में सबसे पुराना साबित कर दें, तो हमारा काम बन गया।

शायद दुनिया हमारे अधिकारों की प्राचीनता को देखकर बिना झगड़ा–झंझट के ही हमें आजाद हो जाने दे, अन्यथा हमारे तरुण अपनी नसों में उस प्राचीन सभ्यता के निर्माताओं का रक्त होने के अभिमान में मतवाले हो जायँ और फिर अपने राष्ट्र की उन्नति के लिए बड़ी से बड़ी कुर्बानी भी उनके बायें हाथ का खेल बन जाय, और तब हमारे देश को आजाद हो जाने में कितने दिन लगेंगे? आज हमारे साथ में चाहे आग्नेय अस्त्र न हों, नई–नई तोपें और मशीन गन न हों, समुन्दर के नीचे और हवा के ऊपर से प्रलय का तूफान मचाने वाली पनडुब्बियों और जहाज न हों, लेकिन यदि हम राजा भोज के काठ के उड़ने वाले घोड़े और शुक्रनति में बारूद साबित कर दें तो हमारे पाँचों अंगलियाँ घी में। इस बेवकूफ़ी का भी कहीं ठिकाना है कि बाप–दादों के झूठ–मूठ के ऐश्वर्य से हम फूले न समायें और हमारा आधा जोश उसी की प्रशंसा में खर्च हो जाय।

अपने प्राचीन काल के गर्व के कारण हम अपने भूत के स्नेह में कड़ाई के साथ बँध जाते हैं और इससे हमें उत्तेजना मिलती है कि अपने पूर्वजों की धार्मिक बातों को आँख मूँद कर मानने के लिए तैयार हो जायँ। बारूद और उड़नखटोला में तो झूठ–साँच पकड़ने की गुंजाइश है, लेकिन धार्मिक क्षेत्र में तो अंधेरे में काली बिल्ली देखने के लिए हरेक आदमी स्वतन्त्र है। न यहाँ सोलहों आना बत्तीसों रत्ती ठीक–ठीक तौलने के लिए कोई तुला है और न झूठ–साँच की कोई पक्की कसौटी। एक चलता–पुर्जा बदमाश है। उसने अपने कौशल, रुपये–पैसे और धोखे–धड़ी और तरह–तरह के प्रलोभन से कुछ स्वार्थियों या आँख के अंधे गाँठ के पूरों को मिलाकर एक नकटा पंथ कायम कर दिया और फिर लगी हजारों छोटी–मोटी, शिक्षित और मूर्ख, काली और सपेद भेड़ें हा–हा कर नाक कटाने। जिन्दगी भर वह बदमाश मौज करता रहा। मरने के बाद उसके अनुयायियों ने उसे और ऊंचा बढ़ाना शुरू किया। अगर उस जमात को कुछ शताब्दियों तक अपने इस प्रचार में कामयाबी मिली तो फिर वह धूर्त दुनिया का महान् पुरूष और पवित्र आत्मा प्रसिद्ध हो गया।

पुराने वक्त की बातों को छोड़ दीजिये। मैंने अपनी आँखों से ऐसे कुछ आदमियों को देखा है जिनमें कुछ मर गये हैं और कुछ अभी तक जिन्दा हैं। उनका भीतरी जीवन कितना घृणित, स्वार्थपूर्ण और असंयत था। लेकिन बाहर भक्त लोग उनके दर्शन, सुमधुर आलाप से अपने को अहोभाग्य समझने लगते थे। नजदीक से देखिये, ये धार्मिक

महात्माओं के मठ और आश्रम ढोंग के प्रचार के लिए खुली पाठशालाएँ हैं और धर्म-प्रचार क्या, पूरे सौ सैकड़ें नफे का रोजगार हैं। अधिकांश लोग इसमें अपने व्यवसाय के ख्याल से जुटे हुए हैं। अयोध्या में एक महात्मा थे। उनसे राम जी इतने प्रसन्न हुए कि उन्होंने स्वयं बैकुण्ठ से आकर उनका पाणिग्रहण किया। हाँ, पाणिग्रहण किया! पुरूष थे पहले, पीछे तो भगवान की कृपा से वह उनकी प्रियतमा के रूप में परिवर्तित कर दिये गये। रामजी के लिए क्या मुश्किल हैं। जब पत्थर मनुष्य के रूप में बदल सकता है तो पुरूष को स्त्री के रूप में बदल सकता है तो पुरूष को स्त्री के रूप में बदल देना कौन-सी बड़ी बात? ऐसा-ऐसा परिवर्तन तो आजकल भी अनायास कितनी बार देखा गया है।

एक नया मत इधर 50-60 वर्ष से चला है। वह दुनिया भर की सारी बेवकूफियों, भूत-प्रेत, जादू-मंत्र सबको विज्ञान से सिद्ध करने के लिए तुला हुआ है। बेवकूफ हिन्दुस्तानी समझते हैं कि ऑक्सफोर्ड और कैम्ब्रिज से गदहे नहीं निकलते और सभी जैक और जान्सन साइन्स छोड़कर दूसरी बात ही नहीं करते। इन अधकचरे पंडितों ने अपने अधूरे ज्ञान के आधार पर भूत-प्रेत, देवी-देवता, साधु-पूजा सबको तीस बरस पहले निकले वैज्ञानिक 'सिद्धान्तों' से सिद्ध करना शुरू किया।

हालाँकि उन सिद्धान्तों से अब 75 फीसदी गलत साबित हो गये हैं, लेकिन अभी अन्धे भक्तों के लिए उस पुराने विज्ञान के पुट से तैयार किए हुए ग्रंथ ब्रह्मवाक्य बन रहे हैं। हिन्दुस्तान का इतिहास बहुत लम्बा-चौड़ा है ही- काल और देश दोनों के ख्याल से। हमारी बेवकूफियों की लिस्ट भी उसी तरह बहुत लम्बी-चौड़ी है। अंधी राष्ट्रीयता और उसके पैगम्बरों ने हममें अपने भूत के प्रति अत्यन्त भक्ति पैदा कर दी है और फिर हमारी उन सभी मूर्खताओं के पोषण के लिए सड़ी-गली विज्ञान की थ्योरियाँ और दिवालिये श्वेतांग तैयार ही है। फिर क्यों न हम अपनी अक्ल बेच खाने के लिए तैयार हो जायँ? जिनके यहाँ वायुयान ही नहीं, काठ के घोड़े भी आकाश में उड़ते हों, जिनके यहाँ बारूद और आग्नेयास्त्र ही नहीं, मुख से निकली हुई ज्वाला में करोड़ों शत्रु एक क्षण में जलकर राख हो जाते हों, जिनकी सूक्ष्म दार्शनिक विवेचनाओं और आत्मवञ्चनाओं को सुनकर आज भी दुनिया दंग हो जाय, वह भला किसी बात को झूठा लिख सकता है? तिपाई पर भूत बुलाना, मेस्मेरिज्म, हेप्नाटिज्म आदि के द्वारा पहले वैज्ञानिक ढंग से हमें अपनी विस्तृत होती जाती बेवकूफियों के पास ले जाया गया और अब तो विज्ञान पारितोषिक विजेता लोग सरे मैदान हरसूराम और हरिराम ब्रह्म की विभूति बाँट रहे हैं। आखिर जब नोबुल पुरस्कार विजेता आलिवर आज भूतो-प्रेतों पर पुस्तकें लिख रहा है और कसम खा-खा कर लोगों में उनका प्रचार कर रहा है तो हमारे इन स्वदेशी भाइयों का कसूर ही क्या?

अभी तक शिक्षित लोग फलित ज्योतिष को झूठ समझते थे, लेकिन अब उसके भी काफी अधिक हिमायती हो चले हैं। वह इसे पक्का विज्ञान मानते हैं। ज्योतिषियों की भविष्यवाणी को छापने के लिए हमारे अखबार एक-दूसरे से होड़ लगा रहे हैं। 27 अगस्त की 'सर्चलाइट' एक ज्योतिषी महाराज की मौसम संबंधी भविष्यवाणी को एक प्रधान पृष्ठ पर स्थान देती है। फिर पूना में लाखों रुपये खर्च करके इसके लिए यन्त्र और विशेषज्ञ रखने की क्या जरूरत है? स्वदेशी का जामाना है, कांग्रेस का मन्त्रि-मण्डल भी हो गया है। ज्योतिषियों को चाहिए कि एक बड़ा-सा डेपुटेशन लेकर मुख्य-मन्त्रियों से मिलें। उनको विश्वास रखना चाहिये कि कांग्रेस के छह प्रान्तों में ऐसे मन्त्री बहुत कम ही होंगे जिनका ज्योतिष में विश्वास न होगा। ज्योतिषी लोग देश-सेवा के खयाल से अपना वेतन कम करने को तैयार होंगे ही, फिर क्या जरूरत है कि स्वदेशी साधन के रहते ऋतु-भविष्य-कथन के यंत्र, भूकम्प के सिस्मोग्राफ आदि का बखेड़ा और उस पर हजार-हजार, पन्द्रह-पन्द्रह सौ रुपये महीना लेने वाले विशेषज्ञों को रखा जाय? ज्योतिषी लोग अपने काम को बड़ी सफलता के साथ कर सकते हैं। उन्हें न यंत्रों की आवश्यकता है और न बाहर से सूचनाओं के मँगाने की। एक स्थान पर बैठे-बैठे ही वह सभी बातों बतला दिया करेंगे। फिर तारीफ यह कि एक ही आदमी अतिवृष्टि और अनावृष्टि को भी बतला देगा और भूकम्प को भी। स्वराज्य की किश्त आने-जाने में अगर कुछ देर होगी तो उसे भी नेताओं की जन्म-पत्री देखकर बतला देगा। अभी इसी साल एक महाराज बादशाह की गद्दी देखने विलायत जाना चाहते थे। दुष्ट ग्रहों की उन्हें बड़ी फिक्र थी और उनसे भी अधिक फिक्र थी उनकी माँ की। एक ज्योतिषी जो न आकर मेष-मिथुन गिनकर महाराज को भी सन्तुष्ट कर दिया कि कोई ग्रह खिलाफ नही है और माँ को भी खम ठोककर कह दिया कि महाराज की कोई अनिष्ट नहीं है, मैं जिम्मेवारी

लेता हूँ। सब लोग प्रसन्न हो गये। ज्योतिषी जी को 5,000 मिले। भला इतना सस्ता जिन्दगी का बीमा कहीं हो सकता है? ऐसा होने पर एक और फायदा होगा। हरेक पांतीय सरकार में एक सराकरी ज्योतिषी और 10–5 सहायत ज्योतिषी होने पर मंत्रियों और पदाधिकारियों को भी ज्योतिषियों के पीछे गली–गली की खाक न छाननी पड़ेगी। अपनी बीवी और छोटे–मोटे बबुआ–बबुनी सबका वर्षा–फल साल का साल पहुंचता रहेगा। स्वदेशी व्यवसाय को जरूर आपको प्रोत्साहन देना चाहिये और इससे बढ़कर शुद्ध स्वदेशी व्यवसाय और क्या हो सकता है जिसके दिल, दिमाग, शरीर और परिश्रम सभी चीजें सोलहों आने स्वदेशी हैं।

हम लोगों के मिथ्या विश्वास क्या एक–दो हैं कि जिन्हें एक छोटे से लेख में लिखा जा सके? हमारे यहाँ तो इसके मिसिल के मिसिल और फाइल की फाइल तैयार है। और तारीफ यह है कि इन बेवकूफियों के भारी–भरकम बोझ को सिर पर लादे हुए हमारे नेता लोग समुन्दर पार कर जाना चाहते हैं। उन्हें पूरा विश्वास है कि बैकुण्ठ के भगवान, आकाश के नवग्रह और पृथ्वी के ज्योतिषी और ओझा–सयाने उनकी यात्रा में जरूर कुछ हाथ बटायेंगे।

हमारी जाति–पाँति की व्यवस्था को ही ले लीजिए। वह हमारे ऋषि–मुनियों के उन बड़े आविष्कारों में है जिन पर हमें बड़ा अभिमान है। राष्ट्रीय भावनाओं की जागृति के साथ–साथ यद्यपि कुछ इने–गिने लोग जाति–पाँति के खिलाफ बोलने लगे, लेकिन अब भी हमारे उच्चकोटि के नेताओं का अधिकांश भाग अपने ऋषियों की इस अद्भुत विशेषता की कद्र करने को तैयार हैं। नेताओं ने देख लिया कि यह जाति–पाँति, आपस के फूट, भेद–भाव के बढ़ाने का एक सबसे बड़ा कारण बन रहा है। कुछ साल पहले तो भीतर–भीतर जातीय संगठन भी इन्होंने कर रखा था और अब भी बहुतों को उसे छोड़ने में मोह लगता है। मैं अन्य नेताओं की बात नहीं कहता। मैं खास कांग्रेस के नेताओं की बात कहता हूँ। उन बेचारों को इसी कोशिश में मरना पड़ रहा है कि कैसे राष्ट्रीयता और जाति–प्राँति दोनों साथ दाहिन–बायें कन्धे पर वहन किये जा सकते हैं। उनमें से कुछ ने तो जरूर समझ लिया होगा कि यह असंभव है। शुद्ध राष्ट्रीयता तब तक आ ही नहीं सकती जब तक आप जाति–पाँति तोड़ने पर तैयार न हों। अगर आप जाति–पाँति तोड़े हुए नहीं है, तो आपका वास्तविक संसार आपकी जाति के भीतर है। बाहर वालों के साथ तो सिर्फ कामचलाऊ समझौता है। जब आप किसी पद पर पहुँचेंगे तो ईमानदारी रहने पर आपकी राय को प्रभावित करने में सफलता सबसे अधिक आपके जाति–भाइयों की होगी। नौकरी–चाकरी दिलाने, कमेटी, सब–कमेटी में भेजने और सिफारिशी चिट्ठी लिखने में मजबूरन आपको अपनी जाति का खयाल करना होगा। आदमी के दिल में हजारों कोठरियाँ जरूर हैं, लेकिन वहाँ ऐसी फर्क–फर्क कोठरियां नहीं हैं जिनमें एक में जाति–पाँति का भाव पड़ा रहे और दूसरे में उससे अछूती राष्ट्रीयता बनी रहे। जैसे किसानों के आंदोलन में आने वाले समझदार आदमियों को पहले ही से तैयार होकर आना चाहिये कि उन्हें साम्यवाद में पैर रखना है, वैसे ही राष्ट्रीयता के पथ पर पैर रखने वालों को भी समझना चाहिये कि उन्हें जाति–पाँति की दीवारों को तोड़ गिराना होगा। यदि कोई आदमी राष्ट्रीय नेता रहना चाहता है और साथ ही अपने जाति–भाइयों की घनिष्ठता को कायम रखना चाहता है तो वह ईमानदार नहीं रहेगा या उसे असफल होकर रहना पड़ेगा। अपनी जाति के साथ घनिष्ठता रखकर कैसे दूसरी जाति का विश्वासपात्र कोई हो सकता है? मन्त्रियों को तो खास तौर से सावधान रहना पड़ेगा। क्योंकि जाति–भाइयों की घनिष्ठता उन्हें आसानी से बदनाम कर सकती है। मेरी समझ में प्रान्त के लिए, राष्ट्र के लिए, कांग्रेस के लिए और व्यक्तिगत तौर से नेताओं के लिए अच्छा यही है कि हरेक प्रधान नेता तुरन्त से तुरन्त अपने लड़के–लड़कियों, भतीजे–भतीजियों अथवा भांजा–भांजियों या नाती–नतिनियों में से कम–से–कम एक की शादी जाति–पाँति तोड़कर दिखला दे, जैसा कि महात्मा गांधी जी तथा राजगोपालाचारी ने करके दिखाया।

आँख मूँदकर हमें समय की प्रतीक्षा नहीं करनी चाहिये। हमें अपनी मानसिक दासता की बेड़ी की एक–एक कड़ी को बेदर्दी के साथ तोड़कर फेंकने के लिए तैयार होना चाहिये। बाहरी क्रान्ति से कहीं ज्यादा जरूरत मानसिक क्रान्ति की है। हमें दाहिन–बायें, आगे–पीछे दोनों हाथ नंगी तलवार नचाते हुए अपनी सभी रूढ़ियों को काटकर आगे बढ़ना चाहिये। क्रान्ति प्रचण्ड आग है, वह गाँव के एक झोपड़े को जलाकर चली नहीं जायगी। वह उसके कच्चे–पक्के सभी घरों को जलाकर खाक कर देगी और हमें नये सिरे से नये महल बनाने के लिए नींव डालनी पड़ेगी।



6. 'पेड़' का कच्चा माल क्या होगा ?

- रंगनायकम्मा

किसी कच्चे माल से अगर हम कोई नयी वस्तु बनायें, तो उस नयी वस्तु का वजन कच्चे माल के वजन से ज्यादा होगा, कम होगा या बराबर होगा?

अभी-अभी हमने कपड़े, धागे और बटनों से कमीज बनायी थी। उस कमीज का वजन इस सारे कच्चे माल के वजन से ज्यादा होगा, कम होगा या बराबर होगा? कम होगा। इसलिए कम होगा कि कपड़ा काटते समय कुछ कतरनें पीछे छूट जाती हैं। धागे के भी फालतू टुकड़े पीछे रह जाते हैं। बटनों में तो ऐसा कुछ नहीं होता जो पीछे छूट जाये। बटन चाहे कमीज पर लगें या अलग रहें, उनका वजन समान ही रह जाता है। लेकिन कपड़े की करतनें और धागों के फालतू टुकड़े पीछे छूट जाने के कारण कमीज का वजन उसे बनाने के लिए प्रयोग किये जाने वाले कच्चे माल के वजन से कम होता है।

बात सिर्फ कमीज की ही नहीं है। किसी भी और चीज के साथ यही होगा। मिसाल के तौर पर कुर्सी! लकड़ी से कुर्सी तैयार करने की प्रक्रिया में लकड़ी से काफी सारा बुरादा निकल आता है। लकड़ी में ठोकें जाने वाले कीलों का वजन समान क्यों न रहे, फिर भी लकड़ी से निकलने वाले बुरादे की छँटाई के कारण कुर्सी का वजन कुर्सी बनाने के काम आने वाले कच्चे माल के वजन से कम ही होगा।

कमीज हो या कुर्सी, ये चीजें निर्जीव वस्तु हैं। इनमें कच्चे माल साफ-साफ दिखायी देते हैं। दोनों में उत्पाद का वजन उसे बनाने के काम आने वाले कच्चे माल के वजन से कम होता है।

लेकिन पेड़, पशु, पक्षी जैसे चीजें निर्जीव वस्तु नहीं होतीं। ये अगर किसी जंगल में पले-बढ़े हों, जहाँ इनसानों से कोई सम्पर्क न हो, तो कुदरती वस्तु होंगी, न कि कोई उत्पाद। पर यदि इन्हें इनसानों ने बड़ा किया हो, तो ये 'उत्पाद' होंगे। ये जीवित वस्तु हैं। ऐसे उत्पाद जिनमें जीव हो। जीवित वस्तुओं के लिए 'कच्चे माल' जैसे शब्दों के प्रयोग की गुंजाइश नहीं होती। 'कच्चा माल' शब्द यहाँ उचित नहीं होता। यहाँ यह नहीं चलता।

पर आइए, हम पेड़ पर विचार करें। यदि कोई पेड़ उगाना हो, तो उसका कच्चा माल क्या होगा? बीज? नही। बीज को कच्चा माल मानें, तो बात कमीज जैसे ही होनी चाहिए। कमीज का वजन जैसे कपड़े से कम था, वैसे ही पेड़ का वजन भी बीज से कम होना चाहिए। मगर ऐसा नहीं है। बीज की तुलना में पेड़ का वजन हजार गुना तो क्या, लाखो गुना अधिक होता है। यही कारण है कि बीज को हम पेड़ का कच्चा माल नहीं मान सकते।

दरअसल बीज के अंकुरित होकर पौधा बनने और पौधे के बढ़ते-बढ़ते पेड़ बन जाने में सिर्फ बीज से ही काम नहीं चलता। बीज के साथ-साथ मिट्टी की उर्वरता, पानी, हवा, सूरज की किरणें-सभी कुछ जरूरी होता है। ये सभी हों, तो ही पौधा जड़ पकड़ पाता है और बढ़ पाता है।

ये सारी ही चीजें पेड़ के जड़ पकड़ने और बढ़ते जाने के लिए जरूरी होती हैं। तो क्या हमें यह समझना चाहिए कि ये सभी चीजें पेड़ के कच्चे माल हैं? नहीं, ऐसा भी नहीं है। इस बात को तय करने के लिए हमें एक बार फिर कमीज के ही साथ तुलना करनी होगी। किसी कच्चे माल को नये उत्पाद में बदल देने के बाद उस कच्चे माल की भूमिका समाप्त हो जाती है। एक ही उत्पाद के लिए बार-बार कोई नया कच्चा माल नहीं लगता। एक बार कपड़ा कमीज में बदल जाये, तो क्या उस कमीज को बार-बार नये कपड़े की जरूरत होती है? नहीं। मगर 'पेड़' के मामले में बात और है। बीज के अंकुरित होकर पौधा निकल आने और पेड़ के बढ़ते जाने के लिए पानी, हवा और सूरज की रोशनी की हर-रोज जरूरत होती है। पेजड पूरा बड़ा हो जाने के बाद क्या इन चीजों की जरूरत खत्म हो जाती है? नहीं। पेड़ कितना बी बड़ा हो, पानी और सूरज की रोशनी और सभी चीजें तब भी नियमित रूप से जरूरी होती हैं। ये सब न मिलें, तो पेड़ मर जायेगा। तात्पर्य यह कि हवा और पानी जैसे चीजें पेड़ के बढ़ने और जीवित रहने के लिए

नियमित रूप से जरूरी खाद्य पदार्थ हैं, न कि ऐसी चीजें जो सिर्फ एक ही बार पेड़ के जड़ पकड़ने तक ही जरूरी हों। इसीलिए वे कच्चे माल नहीं है। बीज, पानी, हवा और ऐसी तमाम चीजे पेंड़ के बढ़ते जाने के लिए जरूरी होती हैं। मगर इन्हें हम कच्चा माल नहीं कह सकते।

'कच्चा माल' शब्द का प्रयोग कमीज और कुर्सी जैसी निर्जीव वस्तुओं के लिए ही उचित है। पेड़, पशु या पक्षी जैसी जीवित वस्तुों के लिए इस शब्द का प्रयोग नहीं होता।

कच्चे माल के बिना बनने वाले उत्पाद : निर्जीव वस्तुओं में भी कुछ गतिविधियाँ होती हैं जहाँ कोई कच्चा माल नहीं होता। यहाँ हम ऐसी ही कुछ गतिविधियों को देखेंगे और उन चीजों को भी जो इनकी पैदाइस हों। जमीन के नीचे एक 'कोयले की खान' है। यदि हम वहाँ से कोयला चाहते हों, तो उसे इस खादन से खोद निकालना होगा। धरती खोद डालने और कोयला बाहर निकालने पर हम पाते हैं कि कोयला एक निर्जीव वस्तु होता है। इस निर्जीव वस्तु को बनाने के लिए कौन सा कच्चा माल लगा था? कोई नहीं। कोयला धरती के अन्दर कुदरती तौर पर पाया जाता है। उसे बाहर निकालने के लिए हमें सिर्फ जमीन से खोद निकालने की जरूरत होती है। इस काम के लिए कोई कच्चे माल जरूरी नहीं होता।

धरती से कन्द - मूल, खनिज और तेल जैसे कुदरती पदार्थों को खोद निकालने; जंगलों से फल, पेड़, पशु, पक्षी बाहर ले जाने; नदियों और सागरों की चीजें निकाल लेने जैसी गतिविधियों में कोई कच्चा माल नहीं लगता। मतलब यह कि कच्चे माल की जरूरत सिर्फ कुछ ही गतिविधियों और कार्यो में होती है, न कि सभी में। लेकिन 'औजार' हर तरह के कामों में जरूरी होते है। औजार सिर्फ उन्हीं कार्यों में जरूरी नहीं होते जिनमें कच्चे माल लगते हों, बल्कि ऐसे कामों में भी जिनमें कच्चे माल न लगते हों। यानि वे हर प्रकार के काम के लिए जरूरी होते हैं।

तो बताएँ, उत्पादों को तैयार करने के लिए क्या कच्चे माल और औजार ही काफी होते हैं? कोई और चीज जरूरी तो नहीं? कोई ऐसी चीज जो न तो कच्चा माल हो और न ही औजार? क्या ऐसा कोई चीज जरूरी होती है? सोचिए इस पर!

सवाल और जवाब

1. एक वस्तु नयी-नयी बनी है। इसे बनाने के लिए कच्चे माल और औजारों का प्रयोग हुआ है। क्या इस नयी वस्तु का वजन कच्चे माल और औजारों पर निर्भर करेगा?

जवाब : नयी वस्तुओं का वजन सिर्फ कच्चे माल पर ही निर्भर करता है। हर नयी वस्तु का वजन उसके कच्चे माल से कम होता है। औजारों के वजन का नयी वस्तु के वजन से कोई वास्ता नहीं होता। औजार किसी वस्तु के अन्दर मौजूद नहीं होते।

2. बीज से एक छोटा पौधा उग आया है। इस पौधे का बढ़ना जारी रखने के लिए मिट्टी की कुदरती उर्वरता, पानी, सूरज की रोशनी, हवा और खाद मदद करती है। अगर हम इन सभी तत्वों को तौल सकें, तो पेड़ का वजन इससे ज्यादा होगा या कम होगा या बराबर होगा?

जवाब : यदि हम सिर्फ बीज को ही देखें, तो पेड़ का वजन उससे लाखों-करोड़ों गुना ज्यादा होगा। लेकिन अगर हम उन सभी तत्वों को तौल सकें जिनसे पेड़ बड़ा हुआ हो, तो पेड़ का वजन सभी तत्वों के बराबर ही होगा। पेड़ का वजन दूसरे तत्वों के समावेश के बिना नहीं बढ़ता। पेड़ में बारीक जो भी कण आ जुड़ते हों, उन्हीं से उसका वजन बढ़ता है।

3. कन्द-मूल कुदरती पदार्थ है या नहीं?

जवाब : इस सवाल का जवाब दे पाने के लिए यह मालूम होना जरूरी है कि इस पौधे का बढ़ना इन्सानी श्रम का परिणाम है या नहीं।

4. क्या पैंसल कुदरती पदार्थ है?

जवाब : नहीं, यह इनसानों की बनायी हुई वस्तु है।

5. सुई क्या है?

जवाब : यह एक वस्तु है।

(स्रोत : पुस्तक ''बच्चों के लिए अर्थशास्त्र'' मार्क्स की ''पूँजी'' पर आधारित पाठ)

''किसी भी देश का शासक अगर अपनी जनता से ज्यादा अपने वस्त्रों पर ध्यान दे तो समझ लीजिए कि उस देश की बागडोर एक बेहद कमजोर, सनकी और डरे हुए इंसान के हाथ में है।'' **- माइकल नास्त्रेडाम्स**

स्वास्थ्य एवं पोषण सुरक्षा हेतु आवश्यक 'पोषक अनाज'

– सुमन रे, मनीष मोहन गोरे, वसुन्धरा भारद्वाज एवं मोहम्मद रईस

जैसा कि हम सभी इस बात से परिचित हैं कि हमारे देश में मिलेट यानी मोटे अनाज की खेती की एक लम्बी विरासत है और प्राचीन काल से इन्हें प्रयोग में लाया जा रहा है। पोषण और स्वास्थ्य की बेहतरी से जुड़ी इनकी विशेषताओं को लेकर चर्चा होती है परन्तु पर्यावरण, कृषि और जलवायु को अनाज किस तरह से सकारात्मक लाभ पहुंचाते हैं, उन दिशाओं में लोग कम ध्यान दे पाते हैं। मिलेट्स से स्वास्थ्य और पोषण सुरक्षा के साथ पारिस्थितिकी (इकोलॉजिकल) संतुलन भी सुनिश्चित होता है। इसके पीछे मिलेट्स की कुछ विशेषताएं जिम्मेदारी होती हैं जैसे कि इन मोटे अनाज के पौधे साधारण और अनुर्वर मिट्टी में भी जीवित रहकर पनपते हैं। शुष्क जलवायु में ये अपना अस्तित्व कायम रखते हैं और इन्हें रासायनिक उर्वरक जैसी बाह्य सहायता की कोई खास जरूरत भी नहीं होती। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि मिलेट्स प्रकृति के साथ सामंजस्य बिठाकर मजबूती के साथ अपने को विकसित करते हैं और मानव सहित विभिन्न जीवों को अनेक प्रकार से लाभ पहुंचाते हैं। इन्हें खाद्य पदार्थ और चारा दोनों रूपों में प्रयोग में लाया जाता है। इनके व्यवसाय से उच्च लाभ भी मिलता है। साथ ही दूसरे अनाजों की तुलना में मिलेट्स में बेहतर पोषण संबंधी गुण पाए जाते हैं इसलिए मानव स्वास्थ्य के लिए ये अधिक कारगर होते हैं।

अंतर्राष्ट्रीय मिलेट वर्ष 2023 एक महत्वपूर्ण अवसर है जो मोटे अनाजों से जुड़े फायदों के प्रति आमजन को जागरूक करने सहित यह बताने का भी मौका देता है कि भारतीय उपमहाद्वीप में इन मोटे अनाजों का लम्बा इतिहास रहा है और इस नाते इनका विशेष सांस्कृतिक महत्व है। ये मोटे अनाज दूसरे महत्वपूर्ण अनाजों के साथ लाभदायक इंटरक्रॉपिंग में भी अहम् भूमिका निभाते हैं। ज्वार, बाजरा, रागी, कुटकी, काकुन, चीना, सावा और कोदो मोटे अनाज के कुछ उदाहरण हैं। ये मोटे अनाज समूचे उप सहारा अफ्रीका और एशिया के लाखों छोटे किसानों के लिए पोषण, आमदनी और जीवन निर्वाह के साधन के रूप में उपयोगी साबित होते हैं। इन्हे खाद्य पदार्थ, चारा, पशु आहार और जैव ईंधन बनाने में इस्तेमाल किया जाता है। मोटे अनाजों में गेंहू और धान की अपेक्षा प्रोटीन और संतुलित अमीनो अम्ल अधिक पाया जाता है। इस तरह से ये मोटे अनाज बाकी अनाजों से पोषण के मामले में श्रेष्ठ होते हैं। इसके अलावा, मोटे अनाज आहार संबंधी रेशों, गुणवत्तापूर्ण वसा और महत्वपूर्ण खनिज जैसे कि कैल्शियम, पोटैशियम, मैग्नीशियम, आयरन, जिंक, मैंगनीज तथा बी कॉम्प्लैक्स विटामिनों के समृद्ध स्रोत हैं। इनमें औषधीय महत्व वाले अनेक पादप रसायन मौजूद होते हैं जो मानव स्वास्थ्य के लिए बहुत लाभकारी होते हैं।

मोटे अनाजों में पोषण और स्वास्थ्य से जुड़े इतने फायदों के बावजूद वर्तमान समय में मानव आबादी इनका सेवन नहीं करती या बहुत कम लोग इसे अपने खाने की थाली में जगह देते हैं। यह एक विडंबना है। मोटे अनाजों के सेवन में इस गिरावट से भारत में पोषण स्थिति में भारी कमी आई है। भारत में कुपोषण की समस्या खेदजनक है। सत्यापित सांख्यिकी आंकड़ों के अनुसार आज लगभग 15 प्रतिशत भारतीय आबादी कुपोषित है। बच्चों और महिलाओं की स्थिति ज्यादा चिंताजनक है। अधिकांश वयस्क, बच्चे और किशोर एनीमिया से ग्रस्त हैं। भारत के लोगों में आयरन, विटामिन ए और आयोडीन की कमी व्याप्त है जिनके कारण एनीमिया, ऑस्टियोपोरोसिस और कुपोषण जैसी प्रमुख स्वास्थ्य समस्याओं का सामना करना पड़ता है। मोटे अनाज के सेवन से इन समस्याओं में भारी कमी लाई जा सकती है।

सीएसआईआर–राष्ट्रीय विज्ञान संचार एवं नीति अनुसंधान संस्थान (निस्पर), नई दिल्ली ने अंतर्राष्ट्रीय मोटा अनाज वर्ष (2023) को संज्ञान में लेकर एक महत्वपूर्ण परियोजना पर काम शुरू किया है। इस परियोजना के मुख्य उद्देश्य हैं–उचित मानव स्वास्थ्य के लिए आवश्यक पोषक तत्वों से युक्त बाजार में उपलब्ध खाद्य उत्पादों को आंकलन, मिलेट आधारित उत्पादों को उपलब्ध कराने वाले उद्योगों का ब्यौरा तैयार करना, भारतीय आर एंड डी संगठनों द्वारा

विकसित ऐसे मोटा अनाज आधारित उत्पादों का ब्यौरा प्राप्त करना जिनका अभी व्यवसायीकरण नहीं हुआ है। व्यापक मानव आबादी के द्वारा मिलेट आधारित उत्पादों का सेवन करने को प्रोत्साहन मिले, इसके लिए नीति विकल्प विकसित करना निस्पर की इस परियोजना का एक अहम लक्ष्य है। इसके लिए राष्ट्रीय सम्मेलन के जरिये नीति संवाद किया जाना है।

मोटे अनाज का उत्पादन, सेवन और प्रोत्साहन आज समय की मांग है। मोटे अनाज कई सतत् विकास लक्ष्यों को भी प्रकारंतर से पुष्ट कर रहे हैं। ये विकास लक्ष्य हैं–निर्धनता को मिटाओ, भुखमरी हटाओ, उत्तम स्वास्थ्य एवं निरोगता, उत्तरादियत्वपूर्ण सेवन एवं उत्पादन, जलवायु क्रिया और धरा पर जीवन।

पोषक अनाज–उत्पादन और सेवन से जुड़ी समस्याएं

बाजरे में शुष्क व सीमांत भूमि पर उगने की क्षमता पायी जाती है और साथ ही इन अनाजों की पोषकता धान और गेहूं से बेहतर होती है। इसके बावजूद भारत में अन्य अनाजों की तुलना में मोटे अनाजों को खेती, खपत और विपणन का तंत्र अविकसित है।

इसके अलावा, स्थानीय बाजारों में मोटे अनाज आधारित किफायती रेडी–टू–कुक और रेडी–टू–ईट उत्पादों की अपर्याप्त उपलब्धता के कारण इनका उत्पादन और उत्पादों की खपत सीमित हो जाती है। भारत में मोटे अनाजों की खपत में काफी गिरावट आई है। इसके पीछे मुख्य कारण इसे गरीबों का भोजन समझना और जागरूकता की कमी हो सकते हैं। यदि इनकी पौष्टिकता का अनुमान लगाना हो, तो यहां दी गयी तालिका उचित जानकारी उपलब्ध कराने के लिए पर्याप्त है।

मोटे अनाजों के गुण और उनसे जुड़े स्वास्थ्य लाभ		
रेशा की उच्च मात्रा	शर्करा धीरे–धीरे मुक्त होते हैं	डायबिटीज, कब्ज और आंत के कैंसर से मुकाबले में सहायता करता है
ग्लूटेन मुक्त	कांप्लेक्स कार्बोहाइड्रेट	सिलिअक रोग को दूर करने में सहायक
पादप रसायन	फिनोलिक एसिड एवं लेवेनोइडस आक्सीडेंट रोधी गतिविधि	समग्र स्वास्थ्य प्रबंधन
न्युट्रास्युटिकल	जीवाणुरोधी	प्रीबायोटिक एवं प्रोबायोटिक एंटी–डायबिटिक और एंटी–ट्यूमरोजेनिक के रुप में सहायक

मिलेट्स का पोषण दायरा अत्यंत व्यापक होता है। ये विटामिन, कैल्शियम, आयरन, पोटेशियम, मैग्नीशियम, जिंक से भरपूर होते हैं, साथ ही ये ग्लूटेन–फ्री भी होते हैं और इनमें जीआई (ग्लाइसेमिक इंडेक्स) कम होता है, जो कि सेहत के लिए फायेदमंद है। इसके अलावा, मधुमेह (डायबिटीज) के मामले में वजन घटाने की दृष्टि से मोटे अनाज उत्कृष्ट खाद्य विकल्प हैं।

मोटे अनाज सूखे की स्थिति में उगने में सक्षम होते हैं और ये भीषण गर्मी का सामना कर सकते हैं। इन विशेषताओं के कारण देश में मिलेट्स के उत्पादन और खपत में वृद्धि से बड़ी संख्या में किसान लाभान्वित होंगे। ये अनाज उपभोक्ताओं को किफायती और पौष्टिक विकल्प मुहैया कर सकते हैं, साथ ही इनके उपभोग से खाद्य सुरक्षा भी सुनिश्चित होती है।

मिलेट आधारित उत्पादों का व्यवसायीकरण आवश्यक

मिलेट आधारित खाद्य उत्पादों का अभी तक व्यावसायीकरण नहीं हुआ है। मिलेट मफिन और कुकीज़, मिलेट मिठाई मिक्स, ब्रेड (रागी और बाजरा), मिलेट उपमा, मिलेट हलवा मिक्स आदि ऐसे महत्वपूर्ण उदाहरण हैं जिनका विकास सीएसआईआर–सीएफटीआरआई, मैसूर के द्वारा किया गया हैं। इन उत्पादों का अभी व्यावसायीकरण किया जाना शेष है।

मिलेट उत्पादन और सेवन से सम्बन्धित नीतिगण चुनौतियां

पिछले दो राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण (NFHS) के चौथे (2015-16) और पांचवें दौर (2019-2020) में भारतीय आबादी के एक बड़े हिस्से की खराब पोषण स्थिति का संज्ञान प्राप्त हुआ। सर्वेक्षण के अनुसार, देश के पांच वर्ष से कम आयु के 35.5 प्रतिशत से अधिक बच्चे कम ऊंचाई के है और 67 प्रतिशत बच्चे एनीमिया से पीड़ित हैं। ये बातें बाल कुपोषण के विभिन्न पहलुओं को दर्शाती हैं। छोटा कद और अन्य स्वास्थ्य संबंधी जटिलताएं लंबे समय तक अल्प-पोषण के परिणाम होते हैं।

धान और गेहूं के उच्च मूल्य के कारण इन फसलों की खेती में वृद्धि हुई और मोटे अनाज जैसे बाजरा के उत्पादन में कमी आई। भारत सरकार के कृषि मंत्रालय की आर्थिकी एवं सांख्यिकी निदेशालय की रिपोर्ट 2020 के अनुसार, बाजरा के तहत सकल फसली क्षेत्र, सकल फसली क्षेत्र 30 प्रतिशत से घटकर 11 प्रतिशत हो गया। मोटे अनाज के तहत क्षेत्र के कम अनुपात के परिणामस्वरूप भी इन अनाजों की कम खपत देखने को मिली।

नवीनतम एनएसएसओ रिपोर्ट (2018-19) के अनुसार, लगभग 24 प्रतिशत धान और 21 प्रतिशत गेहूं की खरीद नामित एजेंसियों द्वारा की जाती हैं, जबकि मोटे अनाज की खरीद कुल उत्पादन का 5 प्रतिशत से कम थी। मौजूदा समय में धान और गेहूं जैसे अनाजों के उत्पादन और सेवन को बढ़ावा मिलता है। इसलिए वर्तमान समय में, समांतर रूप से मोटे अनाजों के उत्पादन, व्यवसायीकरण और सेवन की प्रबल आवश्यकता है।

पोषक अनाज : मानव स्वास्थ्य के लिए उत्तम

एक महत्वपूर्ण शोध यह है कि समय के साथ मानव आबादी में जीवनशैली से संबंधित बीमारियों का प्रसार बढ़ गया है। मोटे अनाजों के उत्पादन में कमी आना इसके पीछे की एक प्रमुख वजह है। मोटे अनाज पोषण सुरक्षा को पूरा करने, जीवन शैली से संबंधित स्वास्थ्य जोखिमों को कम करने और भारत में स्वास्थ्य स्थिरता में सुधार की दिशा में प्रमुख समाधान प्रस्तुत करते हैं।

डॉ. सुमन रे
प्रधान वैज्ञानिक, सीएसआईआर-निस्पर
डॉ. मनीष मोहन गोरे
वैज्ञानिक, सीएसआईआर-निस्पर
वसुन्धरा भारद्वाज
डॉ. मोहम्मद रईस
पूर्व मुख्य वैज्ञानिक, सीएसआईआर-निस्पर
डॉ. के एस. कृष्णन मार्ग, नई दिल्ली 110012
(स्रोतः पत्रिका ''विज्ञान प्रगति'', मार्च 2023)

भारत दर्शन

मंदिर के चढ़ावे में आया अफीम का दूध, पुजारी व चेला बेचने आए, देसूरी में पकड़े

देसूरी थाना पुलिस ने नाकाबंदी के दौरान रविवार देर शाम को बाइक सवार वृद्ध और उसके साथी को गिरफ्तार कर एक किलो अफीम का दूध बरामद किया है। गिरफ्तार 58 वर्षीय आरोपी एक मंदिर का पुजारी है। दूसरा आरोपी उसका चेला है। पूछताछ में पता चला कि अफीम की खेती करने वाले किसान चढ़ावे के रूप में अफीम के दूध का कुछ हिस्सा मंदिर में चढ़ाते है। पुजारी ने चढ़ावे में आए अफीम के दूध को इकट्ठा किया और चेले के साथ अन्य साधु-संतो को बेचने आए थे। देसूरी थाना प्रभारी के अवकाश पर होने से रात को सादड़ी थाना प्रभारी के साथ दासूरी के ए एस आई की टीम ने यह कारवाई की।

तीन साल में 1.12 लाख दिहाड़ी मजदूरों ने आत्महत्या की

नई दिल्ली। सरकार ने राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो (एनसीआरबी) की रिपोर्ट का हवाला देते हुए कहा कि वर्ष 2019 से 2021 तक तीन वर्ष की अवधि में कुल 1.12 लाख दिहाड़ी मजदूरों ने आत्महत्या की। केंद्रीय श्रम एवं रोजगार मंत्री ने लोकसभा में एक प्रश्न के लिखित उतर में यह जानकारी दी। बताया कि दिहाड़ी मजदूरों के अलावा इन तीन वर्ष की अवधि में 66912 गृहणियो, स्वरोजगार वाले 53661 व्यक्तियो, 43420 वेतन भोगी लोगों और 43385 बेरोजगार लोगों ने खुदकुशी की। उनके अनुसार, वर्ष 2019 से 2021 के दौरान 35950 छात्रों और कृषि क्षेत्र में काम करने वाले 31839 लोगों ने आत्महत्या की ।

विज्ञान वरदान या अभिश्राप ?

शिवम अजनबी

स्कूलों में पढ़ाया गया
की विज्ञान
अभिश्राप है या वरदान
मैं कहता हूँ
ऐसे शब्दों के जरिए
विज्ञान को परिभाषित नहीं किया जा सकता।
जिस विज्ञान की बदौलत
दो पैरों पर चलने वाली
एक मामूली प्रजाति
गुफाओं से निकलकर
चांद सितारों तक पहुंची हो
वो विज्ञान
अभिश्राप तो हो ही नही सकता
और यह वरदान भी कैसे होगा ?
वरदान का अर्थ यह कि
किसी ईश्वरीय ताकत के द्वारा
विज्ञान मनुष्य को दान में मिला हो
क्या विज्ञान को
वरदान कहना उचित होगा ?
नहीं बिल्कुल नहीं
यह वरदान नहीं
बल्कि लाखों वर्षों के
कठिन संघर्षों के नतीजे में
इंसान ने इसे हासिल किया है।
मनुष्य के द्वारा
सामान्य ज्ञान से
विशेषज्ञान की ओर
निकलने की महा यात्रा का
परिणाम है
विज्ञान।
भोजन
सुरक्षा और प्रजनन की खातिर
सामान्य ज्ञान तो
हर जीवित इकाई में होता है
इसी सामान्य ज्ञान से
एक चींटी भोजन खोजती है
एक हाथी रास्ता खोजता है
एक डॉलफिन खतरों को भांप पाती है
और एक चिड़िया
रात को अपने घोसलों तक पहुंच पाती है।
इसी सामान्य ज्ञान से ही
होमोसेपियंस भी
जंगल से निकल कर
गुफाओं तक कि यात्रा कर पाया था
और शुरुआती कबीलों को
एकजुट रख पाया था
आगे की यात्रा कठिन थी
सामान्य ज्ञान से काम चलना मुश्किल था
तो होमोसेपियंस
नए अनुभवों से
अपनी समझ को
अलंकृत करता चला गया।
और अपने
सामान्य ज्ञान को
लगातार
परिष्कृत करता चला गया।
हजारों वर्षों के अनुभवों के बाद
होमोसेपियंस का सामान्य ज्ञान
उसके विशेष ज्ञान में बदल गया ।
और यही विशेष ज्ञान
आगे चलकर
विज्ञान में बदल गया।
इसी विज्ञान ने हमे
जीने की वजह दी
और चांद सितारों की समझ दी।
इसी विज्ञान ने हमें

दुनिया को
जोड़ने का सलीका बताया
और धरती पर
रहने का तरीका समझाया।
इसी विज्ञान ने हमें
जिंदगी की कीमत समझाई
और हमारी जिंदगी
की घड़ियां बढ़ाईं ।
न होता विज्ञान तो
हम भटकते रह जाते
खेती की बात अलग हम
गुफाओं तक भी न पहुंच पाते।
इंसान के
लाखों वर्षों के इतिहास में
मुश्किलों के वक्त
ऊपर से कोई पैगाम न आया
कोई मन्तर भी काम न आया
आपदा और महामारी में
कोई खुदा या राम न आया ।
मजहबों के नाम पर
हम जितना बर्बाद हुये
विज्ञान की बदौलत ही
हर मुश्किल से आजाद हुए।
न होता विज्ञान तो
हम आग भी न जला पाते
पत्तों से ढंकते तन को
और घास फूस ही खाते ।
विज्ञान ने
जीने की ख्वाहिशों के साथ ही
उम्र और सेहत दी
धरती आकाश और पाताल को
समझने की समझ दी ।
विज्ञान ने
दूरियों को कम करने का यत्न किया
और
700 करोड़ लोगों को
एक दूजे से
जोड़ने का जतन किया ।
विज्ञान ने ही
कुदरत से जूझने की ताकत दी
न होता विज्ञान तो
मामूली मच्छरों से हार जाते
डेंगू और मलेरिया से ही
'परलोक' सिधार जाते।
युगों पहले
गुफाओं में चित्रों को उकेरने वाले
इंसान ने
किसी वरदान से नहीं
बल्कि अपने विशेष ज्ञान से ही
लिखने की कला हासिल की
और
कल्पनाओं की अनगिनत
पोथियों को
ताड़पत्रों पर रच डाला।
आगे चलकर
लिखने का विशेष ज्ञान
और परिष्कृत हुआ
और हम
छपाई की मशीनों से
नकली खुदाओं के
असली मनोविज्ञान को
कागज पर छापने लगे।
और फिर
विज्ञान के जरिये
कागज पर छपी
इन्हीं पोथियों में
विज्ञान को ढूंढने लगे।
विज्ञान की बदौलत ही
काबा बना
वेटिकन बना
हाजिया सोफिया
या केदारनाथ का निर्माण भी
इंसान के

शेष पृष्ठ 22 पर

देश की विशाल आबादी को शिक्षा से दूर धकेलने का मसौदा!



- डॉ. शुभकर्मदीप सिंह

कोविड-19 महामारी के कारण 2020 में लगाए देशव्यापी लॉकडाऊन की आड़ में मोदी सरकार ने अपने फासीवादी रथ को सरपट दौड़ाया और संसद में बिना किसी चर्चा के और बिना किसी उचित प्रणाली का पालन करते हुए धड़ाधड़ नादिरशाही फैसले सुनाए। इन सभी फैसलों की चकाचौंध में एक प्रमुख फैसला था-'नई शिक्षा नीति 2020'। 34 साल के लंबे अंतराल के बाद इक्कीसवीं सदी में पारित होने वाली ये पहली शिक्षा नीति है। अगर कोई भी इस नीति के ऊपर एक नज़र दौड़ाए, तो स्पष्ट हो जाता है कि इस नीति की सबसे बड़ी खासियत इसे लिखने में उपयोग की गई अनेकार्थी (ambiguous) और लच्छेदार भाषा है। ऐसी भाषा का उपयोग किया गया है कि जनमानस को इस लच्छेदार भाषा के भीतर छुपे इसके अभिप्राय की भनक तक न लगे। इस सबके बावजूद भी यह नीति अंतर्विरोधों से भरी पड़ी है। दो भिन्न पृष्ठों पर तो दूर, बहुत जगह ये अंतर्विरोध एक ही पृष्ठ के विभिन्न पैराग्राफ में मिले जाते हैं। यह लेख मुख्य रूप से इस शिक्षा नीति के 2023 में लागू होने से भारतीय शिक्षा व्यवस्था पर पड़ने वाले प्रभावों पर केंद्रित रहेगा।

नई शिक्षा नीति 2020 भारत की चौथी शिक्षा नीति हैं। विभिन्न सरकारें अपने देशी और विदेशी आकाओं यानी बड़े पूंजीपतियों, विश्व व्यापार संगठन, वर्ल्ड बैंक और विश्व साम्राज्यवादी ताकतों के इशारों पर और अपनी ज़रूरत के अनुसार शिक्षा नीति बनाते हैं। भारत में पहली शिक्षा नीति 1968 में बनायी गई, फिर दूसरी 1986 में। 1991 में उदारीकरण, निजीकरण और वैश्वीकरण की नीतियां अपनाने के बाद विश्व पूंजी की ज़रूरतें जिस प्रकार से बदली, उसके मुताबिक ही 1992 में तीसरी शिक्षा नीति बनाई गई। इक्कीसवीं सदी में आक्रामक पूंजीवाद के इस दौर में विश्व पूंजी की और ब्राहणवादी और हिन्दुत्ववादी भारतीय सत्ता की जिस तरह की ज़रूरतें हैं, उसे पूरा करने के लिए नई शिक्षा नीति 2020 लायी गई है। विश्व पूंजी की आज के दौर से ऐसे कामगारों की ज़रूरत है जो मल्टी डिसिप्लिनरी या अनेक व्यवसायों में निपुण हो, यह शिक्षा नीति ऐसे नौजवानों की एक बड़ी फौज तैयार करेगी। यह पूरे भारतीय समाज का संपूर्ण भगवाकरण करने का यंत्र है। इस शिक्षा नीति के लागू होते ही भाजपा और आरएसएस भारत को एक हिंदू राष्ट्र बनाने के अपने लक्ष्य के बहुत नजदीक पहुँच जाएगी और स्कूल, कॉलेज एवं विश्वविद्यालय फिर शिक्षा के स्थान की बजाए पूर्ण रूप से हिंदुत्तवादियों की एक फौज बनाने की प्रयोगशालाएं बन जाएगी।

अगर ऐतिहासिक तौर पर देखें, तो यह पता चलता है कि भारत ऐसा देश था जहाँ समाज के बड़े हिस्से को सदैव किसी भी प्रकार की शिक्षा और ज्ञान से सदा वंचित रखा गया। सामंतवादी और ब्राहणवादी विचारधारा के असर तहत किसी भी प्रकार की शिक्षा और ज्ञान पर समाज के एक बहुत ही छोटे से उच्चे तबके और ब्राहणों का एकाधिकार था। शिक्षा ग्रहण करना तो दूर, औरतों, दलितों और अन्य निचली जातियों के लिए ज्ञान की कोई बात सुनना तक भी वर्जित ता। इसे सुनिश्चित करने के लिए बाकयदा सजाएँ और कानून तक मौजूद थे। 19 वीं और 20 वीं शताब्दी के परिवर्तनवादी और क्रान्तिवादी विचारकों से पहले किसी ने भी समाज में सभी के लिए और खास तौर पर औरतों, दलितों और पिछड़ों के लिए शिक्षा की बात नहीं की थी। सावित्री बाई फुले, महात्मा ज्योतिबा फूले ने 19 वीं शताब्दी और 20 वीं शताब्दी में बाबा साहब डॉक्टर अंबेडकर और अय्यनकाली ने शोषितों एवं दलितों में शिक्षा के प्रसार के लिए खास तौर पर काम किया। ये शिक्षा नीति फिर से ऐसे हालात पैदा करेगी, जिससे समाज के उच्च वर्ग एवं कुछ चुनिंदा लोग उच्च शिक्षा एवं आधुनिक शिक्षा की मंज़िल तक पहुँच कर पाएंगे।

प्राइमरी शिक्षा पर पड़ने वाले प्रभाव

∞ नई शिक्षा नीति 2020 सम्पूर्ण स्कूली शिक्षा व्यवस्था को पुनर्गठित करते हुए मौजूदा 10+2 की जगह 5+3+3+4 की एक बिल्कुल नई संरचना स्थापित करेगी। (5(3 साल आंगनवाड़ी/प्रीस्कूल/बाल वाटिका+कक्षा 1 और

2)+कक्षा 3 से 5+कक्षा 6 से 8+कक्षा 9 से 12)

∞ 5+3+3+4 के नए फॉर्मूले के जरिए आर.टी. ई के तहत मिलने वाली प्रारम्भिक शिक्षा के मौलिक अधिकार की आठ सालों की अवधि को घटाकर छः सालों (कक्षा तीन से आठ तक सीमित कर दिया गया है।

∞ इस शिक्षा नीति में प्री प्राइमरी से लेकर 12 वीं कक्षा तक व्यावसायिक शिक्षा (vocational education) की शुरुआत की जा रही है। इसका विवरण करते हुए कहीं पर भी जाति व्यवस्था और पितृसत्ता की बात नहीं की गई जो हमारे मनुवादी-ब्राह्मणवादी समाज में सभी व्यवसायों में सब कुछ तय करते हैं। बढ़ईगीरी, धातु का काम, बागवानी, मिट्टी के बर्तनों के निर्माण, आदि व्यावसायिक शिल्पों में निपुण करने की बात की गई है।

∞ गौरतलब है कि ये सभी व्यावसायिक काम हमारे समाज में दलित एवं पिछड़े वर्गों के लोग करते हैं। ज़ाहिर है कि जब स्थानीय लोगों का इस बात का निर्णय लेना होगा, जैसा कि नीति में बताया गया है कि किस विद्यार्थी को क्या व्यवसायिक शिक्षा दी जाए तो वह जाति व्यवस्था के चलते किसी उच्च जाति के विद्यार्थी को ऐसे व्यवसाय में नही भेजेंगे, जिसे नीचे समझा जाता हो।

∞ सरकारी स्कूलों में पढ़ने वाले सामाजिक आर्थिक रूप से वंचित समूहों (SEDGs), जैसे कि इस शिक्षा नीति में अनुसूचित जाति (SC), अनुसूचित जनजाति (ST), अन्य पिछती जाति आदि सभी को इस एक समूह में रखा गया है, से आने वाले विद्यार्थियों को व्यावसायिक शिक्षा के लिए प्रोत्साहित किया जाएगा। इसके विपरीत निजी स्कूलों से पढ़ने वाले विद्यार्थियों को अपनी अकादमिक शिक्षा पर ध्यान देते हुए विभिन्न प्रतियोगी परीक्षाओं में बैठने के लिए प्रोत्साहित किया जाएगा। यही है नव उदारवादी 'चयन का अधिकार' का असली रूप।

∞ 14 वर्ष की आयु तक के विद्यार्थियों के लिए मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा का इस पूरी नीति में कही भी कोई विवरण नहीं मिलता। इस प्रकार इस शिक्षा नीति से आर. टी. ई. तहत मिला ये अधिकार भी छीन लिया है।

∞ पूरे देश में कोऑर्डिनेशन के नाम पर आंकलन और मूल्यांकन के एक ही मापदंड निर्धारित कर दिए जांएगे जिसे परख (समग्र विकास के लिए ज्ञान का प्रदर्शन, मूल्यांकन समीक्षा और विश्लेषण) [PARAKH] (Performance Assessment, Review and Analysis of Knwoledge for Holistic Development) का नाम दिया गया है। भारत जैसे विशाल और विभिन्न सांस्कृतियों के देश में ऐसा करना विद्यार्थियों के लिए दुष्प्रभावी रहेगा।

∞ प्राइमरी शिक्षा तक का घोर केंद्रीयकरण करते हुए राष्ट्रीय मूल्यांकन केंद्र (National Assessment Centre) स्थापित किया जाएगा जिसके तहत एलीमेंट्री स्कूलों में ही कक्षा तीसरी, पांचवी और आठवीं में ही केंद्रीकृत परीक्षा ली जाएगी।

∞ इन परीक्षाओं में आंकलन और मूल्यांकन का भी पूरे देश में एक ही मापदंड रहेगा, जिसे एन. ए. सी. ही तय करेगा, इस तरह के ये घोर केंद्रीकरण शैक्षिक संस्थानों की स्वायसत्ता को पूरी तरह नष्ट कर देगा।

प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा (ECCE)

∞ नई शिक्षा नीति के जिस एक प्रावधान की सबसे ज़्यादा चर्चा हो रही है, वह है 3-8 साल की बच्चों के लिए प्री प्राइमरी शिक्षा की व्यवस्था करना जिसे प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा या ECCE का नाम दिया गया है। इसका एक बहुत महत्वपूर्ण व बड़े कदम के रूप में प्रचार किया जा रहा है।

∞ ई. सी. सी. ई. के प्रावधान को जिस तरह बनाया गया है उससे ये मालूम होता है कि सरकार भारत के बच्चों के हालातों और उनकी सामाजिक असलियत से बिलकुल वाकिफ ही नहीं है। इस प्रावधान में शिक्षा को सिर्फ अक्षर ज्ञान और संख्यात्मक ज्ञान (literacy & numeracy) तक ही सीमित कर दिया गया है जिसका केंद्रबिंदु 'बेहतर नतीजों' को माना गया है। प्रारंभिक वर्षों से ही सिर्फ परिणामों पर केंद्रित होना शिक्षा की एक खराब और रूढ़िवादी अवधारणा को दर्शाता है।

ई.सी.सी.ई. कि यह अवधारणा स्कूली शिक्षा में प्रवेश के लिए तैयार रहने का सारा का सार बोझ सिर्फ और सिर्फ विद्यार्थी के कंधों पर लाद देती है। ये सुनिश्चित करना सरकार का फर्ज़ बनता है कि स्कूल विद्यार्थियों के प्रवेश के लिए तैयार है, इसके विपरीत ई.सी.सी.ई. यह संदेह पैदा करती है कि विद्यार्थी स्कूल जाने के लिए तैयार हैं या नहीं।

इसी को विभिन्न तरीकों से सभी बच्चों पर थोपा भी जाएगा। कक्षा प्रथम से पहले ही प्रारंभिक कक्षा जिसको 'बालवाटिका' का नाम दिया गया है और इसके बाद एक

'स्कूल तैयारी मॉडयूल'। परिणाम केंद्रित होने के कारण ये दोनों इतनी छोटी उम्र के विद्यार्थियों में 'पराफॉर्मेस एंग्ज़ायटी' के सिवाय कुछ और नहीं पैदा कर पाएंगे।

∞ ई. सी. सी. ई. में आंगनबाड़ी सेटरों को प्राइमरी स्कूलों में स्थानांतरित करने का प्रावधान भी दिया गया है, जो अभी तक बच्चों के अपने गली मोहल्लों या आस-पास ही मौजूद रहते हैं। यह एक तरह से बच्चों को उनके अपने परिवेश से उजाड़ने समान हैं।

∞ नई शिक्षा नीति में बार-बार ई. सी. सी. ई. से लेकर सीनियर सेकेंडरी तक सभी स्कूलों में प्रशिक्षित स्वयं सेवकों (trained volunteers) को रखने का वायदा किया गया है। हालाँकि ये स्वयं सेवक कौन होंगे और इनकी योग्यता क्या होगी इसके बारे में कुछ तय नहीं किया गया। ज़ाहिर है कि इस काम के लिए आर.एस.एस. के कॉडर को ही तरजीह दी जाएगी जो इस सत्ता के लिए 'हिंदू राष्ट्र' के अपने सपने को पूरा करने में अति उपयोगी रहेगा।

∞ ई. सी. सी. ई. सरकार की शिक्षा के बाज़ारीकरण और वाणिज्यिकरण की योजना में बिल्कुल अच्छे से समा जाता है। इसके मुताबिक पाँच साल की प्रारंभिक शिक्षा, जिमसें तीन वर्ष का प्री स्कूल और बाद में प्रथम और द्वितीय कक्षा मौजूद है निश्चित ही प्ले स्कूलों के बाज़ार को और बढ़ावा देंगे। अभी भी इनकी गिनती में इज़ाफा ज़रूर हो रहा है लेकिन नई शिक्षा नीति में मौजूद ई. सी. सी. ई. जैसे प्रावधान और निजी या प्राइवेट कॉर्पोरेशनों के लिए कोई खास कानून और नीति न होने के कारण प्राइवेट प्लेयरों की स्थिति को प्री प्राईमरी और प्राइमरी शिक्षा में भी और मज़बूत करेंगे।

उच्च शिक्षा पर पड़ने वाले प्रभाव

∞ नई शिक्षा नीति के तहत विश्वविद्यालय का प्रबंधन एक स्वतंत्र केंद्र द्वारा नियुक्त किए गए 'बोर्ड ऑफ गर्वनर्स' को दे दिया जाएगा। जो अभी अकादमिक काउंसिल या सेनेट द्वारा किया जाता है। इन काउंसिलों में लोकतांत्रिक तरीके से चुने गए नुमाइंदे जिनमें विश्वविद्यालय के प्राध्यापक, अफसर, विधायक, सांसद आदि और कुछ जगह विद्यार्थी भी शामिल रहते हैं। इस तरह विश्वविद्यालयों का प्रबंधन पूर्ण तौर पर केंद्र के हाथों में थमा दिया जाएगा।

सरकारी महाविद्यालयों में ग्रेडेड स्वायत्तता (graded autonomy) को राष्ट्रीय प्रत्यायन परिषद (NAC) के साथ जोड़कर यह नीति सरकारी विश्वविद्यालयों को विखंडित कर देगी। जिन महाविद्यालयों का NAC स्कोर ज़्यादा होगा उन्हें ग्रेडेड स्वायत्तता के नाम पर विश्वविद्यालयों से बाहर जाने के लिए प्रोत्साहित किया जाएगा। इस तरह कुछ चुनिंदा कुलीन संस्थानों को बेहतर आर्थिक एवं हर प्रकार की सहायता के ज़रिए तरजीह मिलेगी। और बाकी बचे अधिकांश संस्थान जो पहले ही आर्थिक मंदीहाली से जूझ रहे हैं, जैसे कि राज्य सरकारों द्वारा संचालित महाविद्यालय, इस दौड़ से बाहर हो जाएंगे।

∞ नई शिक्षा नीति में चार वर्षीय अंडरग्रैजुएट डिग्री को फिर से लाया गया है। इससे अधिकांश विद्यार्थियों के लिए ग्रेजुएट डिग्री पूरी करने का खर्च और भी बढ़ जाएगा जिसका असर खास तौर पर सामाजिक और आर्थिक तौर पर पिछड़े विद्यार्थियों पर पड़ेगा। वहीं दूसरी और अमेरिकी विश्वविद्यालयों और महाविद्यालय में उच्च शिक्षा हासिल करने की इच्छा रखने वाले बहुत छोटी गिनती में मौजूद कुछ चुनिंदा विद्यार्थियों के लिए यह लाभदायक होगा। साफ तौर पर यह फैसला उन कुछ चुनिंदा विद्यार्थियों को ध्यान में रखते हुए अधिकांश के विद्यार्थियों पर थोपा जाएगा।

∞ स्नातकोत्तर याँ पोस्ट ग्रेजुएशन की डिग्री की अवधि घटाकर एक साल कर दी गई है और एम. फिल. की डिग्री को खत्म कर दिया गया है। इससे भारत में रहकर उच्च शिक्षा और अनुसंधान करने वाले विद्यार्थियों के लिए मुश्किलें बढ़ जाएगी।

∞ अमेरिका से लिया हुआ मल्टिपल एंट्री व एग्ज़िट पोइंटस का फॉर्मूला बिना कुछ जाँचें परखे और भारत में बिना किसी ऐसी जरूरत के लागू कर दिया जाएगा। भारत में गरीबी और बेरोज़गारी की दर को देखते हुए यह कोई तार्किक फैसला नहीं है। समाज के कुछ चुनिंदा उच्च वर्गों से आने वाले विद्यार्थियों के लिए तो ये चाइस रहेगी लेकिन गरीब, महिला और अन्य उत्पीड़ित वर्ग से आने वाले विद्यार्थियों के लिए इसका कोई लाभ नहीं होगा।

∞ इस नीति के तहत पूरे भारत के सभी विश्वविद्यालयों और महाविद्यालयों के साथ-साथ पेशेवर संस्थानों के लिए एक मात्र प्रवेश परीक्षा करवाने के लिए नैशनल टेस्टिंग एजेंसी (एन. टी. ए.) गठित करने का प्रावधान है। पूरे देश में एक मात्र प्रवेश परीक्षा के कारण कोचिंग सेंटरों को बड़े रूप में बढ़ावा मिलेगा जैसा कि

अभी आई.आई.टी. और मेडिकल प्रवेश परीक्षा के लिए चलता है।

∞ वैज्ञानिक और तकनीकी अनुसंधान के सभी संस्थानों के लिए नेशनल रिसर्च फाउंडेशन (एन.ऑर. एफ) बनाने का प्रावधान है जिसके ज़रिये केंद्रीय सरकार सभी वैज्ञानिक और तकनीकी संस्थानों को पूर्ण रूप से नियंत्रित करेगी। इसमें अटॉमिक एनर्जी, बायोटेक्नेलॉजी, कृषि विज्ञान, पशु चिकित्सा विज्ञान, मेडिकल साइंस, सामाजिक विज्ञान और हयूमैनिटीज़ जैसे विभिन्न विषयों में सब काम एन. आर.एफ. की देख रेख में ही किया जाएगा जो कि किसी भी प्रकार के अनुसंधान के लिए अति आवश्यक है।

∞ इस शिक्षा नीति में किसी भी तरह की विद्यार्थी परिषद और टीचर एसोसिएशन की कोई बात नहीं की गई की। और न ही जमहूरी तरीके से चुनी गई किसी स्टूडेंट यूनियन को आज्ञा दी गई है। विद्यार्थियों के संघर्ष के लंबे इतिहास के कारण और उनकी पिछले लंबे समय से हर जन आदोलन में मौजूदगी के कारण यह बात मोदी व संघ की सरकार ने पिछले आठ सालों में बखूबी सीख ली है।

> ***इस शिक्षा नीति में किसी भी तरह की विद्यार्थी परिषद और टीचर एसोसिएशन की कोई बात नहीं की गई और न ही जमहूरी तरीके से चुनी गई किसी स्टूडेंट यूनियन को आज्ञा दी गई है।***

नई शिक्षा नीति की भाषा नीति

∞ नई शिक्षा नीति 2020 की भाषा नीति को भी एक उम्दा और बेहतरीन कदम के रूप में दर्शाते हुए बहुत प्रचार किया जा रहा है। परंतु इसकी परतों को कुरेदकर ही इसकी असलियत समझ में आती है।

∞ यह वैज्ञानिक तौर पर स्थापित है कि मातृभाषा को शिक्षा के माध्यम के तौर पर इस्तेमाल करना से विद्यार्थियों का अत्यधिक लाभ होता है। नई शिक्षा नीति मातृभाषा में शिक्षा देने की बात करती है, परंतु ध्यान से इसे खंगालने पर ये पता लगता है, कि ये सिर्फ ऐसी बात ही करती है न कि इसे लागू करने की।

∞ मातृभाषा के बारे में नीति में अनेक अंतर्विरोध, अस्पष्टता और खलल मौजूद हैं। इस नीति में घर की भाषा / मातृभाषा / स्थानीय भाषा / क्षेत्रीय भाषा सभी को पर्यायवाची के तौर पर इस्तेमाल किया गया है। ये बहुत ही खतरनाक कदम है। मातृभाषा और स्थानीय भाषा या क्षेत्रीय भाषा में बहुत अंतर है। एक ही क्षेत्र में रहने वाले विभिन्न विद्यार्थियों की विभिन्न मातृभाषाएँ हो सकती हैं. हालांकि वहाँ की क्षेत्रीय भाषा एक ही रहेगी। उदाहरण के लिए पंजाब से बंगाल गए किसी विद्यार्थी की मातृभाषा तो पंजाबी ही रहेगी हालाँकि वहाँ की क्षेत्रीय भाषा बंगाली होगी। इन सभी को पर्यायवाची के तौर पर इस्तेमाल नहीं किया जा सकता। यह नीति कहीं पर भी ये सुनिश्चित नहीं करती कि मातृभाषा में शिक्षा देने के लिए इस अडचन को कैसे पार किया जाएगा। मातृभाषा मे शिक्षा देने का एक हास्यास्पद उदाहरण हाल ही में आया जब गृहमंत्री ने चिकित्सा विज्ञान की किताब का हिन्दी संस्करण विमोचित करते हुए चिकित्सा की पढ़ाई हिन्दी में किये जाने की घोषणा की। इस विमोचित किताब का नाम ही अंग्रेजी था, जिसे देवनागरी लिपि में लिख दिया गया था। दरअसल मातृभाषा में पढ़ाई शुरू करने के पहले की जो तैयारी है, वो किये बगैर इसके दावे करना हास्यास्पद ही है।

∞ नीति में ये भी कही सुनिश्चित नही किया गया की मातृभाषा में शिक्षा को कानूनी तौर पर लागू करवाया जाएगा, सिर्फ इसे तरजीह देने की सिफारिश की गई है।

∞ यह शिक्षा नीति सभी भारतीय भाषाओं को संस्कृत से उत्पन्न हुई बताती है जैसा कि बिलकुल भी नहीं है। संस्कृत के प्रचार-प्रसार के लिए नीति में कई जगह बात की गई है परंतु बाकी सभी प्राचीन और क्लासिकल भाषाएँ जैसे की तमिल, तेलुगु, कन्नड, मलयालम, ओडिया, पाली, फारसी और प्राकृत का सिर्फ नाम ही लिया गया है।

∞ सरकारी आंकड़े भी संस्कृत के अलावा बाकी सभी प्राचीन भाषाओं के साथ हो रहे भेदभाव को दर्शाते हैं। जहाँ संस्कृत के प्रचार और प्रसार के लिए सरकार ने 644 करोड़ रुपये खर्च किए हैं वहीं बाकी पाँच क्लासिकी भाषाओं (तमिल, तेलुगु, कन्नड़, मलयालम, ओडिया) के लिए सिर्फ 29 करोड खर्च किए हैं।

∞ इस नीति में एक ओर सभी भारतीय भाषाओं में मौजूद मौखिक एवं लिखित साहित्य और सांस्कृतिक परंपराओं को सहेजने और बचाने की बात की गई है परंतु उर्दू का पूरी नीति में कहीं पर भी जिक्र तक नहीं किया। उर्दू

भारत में जन्मी और एक उत्कृष्ट इतिहास और विशेष स्थान रखने वाली भाषा है। भारत के विभिन्न राज्यों में उर्दू बोली जाती है और इसे बोलने वालों की गिनती छह करोड़ के करीब है वहीं संस्कृत बोलने वाले सिर्फ 23 लाख लोग हैं।

नई शिक्षा नीति के कारण होने वाला शिक्षा का बाज़ारीकरण

हालाँकि शिक्षा कोई खरीद–फरोख्त की वस्तु नहीं है जिसे बाजार में बेचा जा सके परंतु ये शिक्षा नीति शिक्षा को पूर्ण रूप में एक ऐसी वस्तु (commodity) बना देगी।

∞ फिलैथ्रोपिक संस्थानों को शिक्षा में जगह देने के नाम पर इस नीति ने पूर्ण रूप से शिक्षा के बाजारीकरण के लिए सब रास्ते खोल दिए हैं।

∞ पी.पी.पी. का नाम पब्लिक प्राईवेट पार्टनरशिप से बदलकर पब्लिक फिलैथोपिक पार्टनरशिप रख दिया है। जिसके ज़रिए देसी और विदेशी पूंजीपतियों को शिक्षा में निवेश के लिए पूर्ण रूप से आजादी दी जाएगी। इस सारी पूंजी का लक्ष्य सिर्फ मुनाफा कमाने तक सीमित रहेगा ना कि किसी को शिक्षा देने का।

∞ ऐसे संस्थानों में विद्यार्थियों को स्कॉलरशिप नहीं बल्कि स्टूडेंट लोन के जरिए ही शिक्षा का मौका मिलेगा और अमेरिका की तर्ज पर भारत के सभी नौजवान भी इस कर्ज को उतारने में अपनी सारी जिंदगी गुजार देंगे।

∞ भारत के विभिन्न राज्यों में मौजूद प्राइवेट विश्वविद्यालय इस बात के साक्षी है कि इस तरह पूजीपति शिक्षा को भी सिर्फ अपने मुनाफे की मशीन के रूप में इस्तेमाल करते हैं और विद्यार्थियों का क्या हश्र कर देते है।

∞ पूरी शिक्षा नीति में कहीं पर भी मुफ्त शिक्षा का प्रावधान नहीं दिया गया बल्कि मुफ्त शिक्षा को अफोडेवल शिक्षा में बदलने की बात की गई है।

नई शिक्षा नीति 2020 के प्रभाव

∞ आधुनिक भारतीय कुछ हद तक मौजूद वैज्ञानिक और परिवर्तनवादी मूल्यों को हिंदुत्ववादी और ब्राह्मणवादी मूल्यों के जरिए विस्थापित कर दिया जाएगा।

∞ सरकारी और पब्लिक सेकटर की शिक्षा व्यवस्था को पूर्ण तौर से नष्ट कर दिया जाएगा।

∞ समाज के एक बड़े हिस्से से आने वाले विद्यार्थी एवं नौजवान खास तौर पर गरीब, शोषित, उत्पीड़ित और दलित तबके से आने वाले विद्यार्थी शिक्षा व्यवस्था से बाहर धकेले जाएंगे।

∞ आरक्षण के जरिये समाज के उत्पीडित तबकों को मिली कुछ नुमाइंदगी को भी मेरिट के नाम पर ध्वस्त कर दिया जाएगा और शिक्षा कुछ चुनिंदा अमीरों और सवर्ण जातियों के लोगों का एकाधिकार बन जाएगी।

∞ विश्वविद्यालयों और कॉलेजों महाविद्यालयों के विद्यार्थियों को अध्यापको और कर्मचारियों के लिए जो बची–खुची लोकतांत्रिक जगह है, उसे भी खत्म कर दिया जाएगा।

∞ केंद्रीय एजेंसियों के सौ फीसदी नियंत्रण के जरिए शिक्षा व्यवस्था में मौजूद संघीय ढांचे को पूर्ण तौर पर खत्म कर दिया जाएगा।

नई शिक्षा नीति 2020 को लागू होने से रोकने के लिए पूरे देश की अवाम को हर संभव प्रयास करना चाहिए नहीं तो ये नीति लागू होते ही लोकतांत्रिक भारत को भाजपा के लक्ष्य एक हिन्दुत्ववादी भगवा राष्ट्र की ओर बढ़ा देगी।

लेखक अमृतसर में चिकित्सा विज्ञान के छात्र है।

स्रोतः पत्रिका 'दस्तक' नवम्बर–दिसम्बर 2022

पृष्ठ 17 का शेष

विशेष ज्ञान की बदौलत ही
मुमकिन हो पाया।
इंसान ने
विज्ञान की बदौलत ही
गुम्बदों मीनारों की तामीर की
विज्ञान की बदौलत ही
पत्थरों को तराशा और
उन्हीं पत्थरों को
ईंट सीमेंट और कंक्रीट के मंदिरों में
स्थापित किया।
न होता विज्ञान तो
हम कुछ भी न कर पाते
दो पैरों पर चलने वाले
जानवर ही रह जाते
दो पैरों पर चलने वाले
जानवर ही रह जाते।

लड़कियों की भानमती

- डॉ. नरेंद्र दाभोलकर

तीस वर्ष तक कडेगाँव (तह. खानपुर, जिला सांगली) में डॉक्टर रहे बर्वे का संदेश इसके पहले ही मिला था, लेकिन इसके साथ-साथ समाचार-पत्रों के स्पष्ट चौखाने में समाचार भी दिखे। उनका स्वरूप साधारणतया इस प्रकार का था-

'दिनांक 13 मार्च : कडेगाँव जिला परिषद की कन्या पाठशाला की कुछ छात्राओं की आँखों से अचानक कंकड़ और काँच के टुकड़ों के आने की घटना से गाँव में हड़कंप मच गया है। पिछले कई वर्षों से छात्राओं की यह पाठशाला गजानन देशपांडे के घर में चलती आ रही है। पिछले दो-तीन दिन से अचानक छात्राओं की आँखों से कंकड़ और काँच के टुकड़े निकलने शुरू हुए हैं। सबसे पहले तनुजा मानसिंग माने की आँखों से ऐसे टुकड़े निकलने शुरू हुए। इसके बाद उसी दिन कई छात्राओं की आँखों से कंकड़ बाहर आए। ऊबड़-खाबड़ कंकड़ 2 से 5 ग्राम वजन के हैं। अध्यापक, सभापति, अभिभावकों के साथ नागरिकों के सामने भी यह वाकया कई बार घटित हुआ है। गाँव वालों ने मिलकर पाठशाला के स्थानांतर का निर्णय लिया है। प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र के डॉक्टरों के साथ गाँव के अन्य डॉक्टरों द्वारा जाँच की गई। डॉक्टर लोग भी इस पहेली से उलझन में हैं। अभिभावकों ने अपनी बच्चियों को पाठशाला भेजना बंद कर दिया है। पच्चीस छात्राओं की आँखों से ये कंकड़ निकल रहे हैं। विज्ञान के नियमों से इतर यह घटना परे इलाके में चर्चा का विषय बनी हुई है।'



इन खबरों को पढ़कर हमने तुरंत कडेगाँव की ओर प्रयाण करने का निर्णय लिया। सतारा से मैं, मानसोपचार विशेषज्ञ प्रसन्न दाभोलकर, सतारा के अंधश्रद्धा निर्मूलन समिति के पदाधिकारी कुमार मंडपे, मारुतराव पांगे और दो-तीन उत्साही युवक मिलकर हम सब सुबह दस के आसपास कडेगाँव में पहुँचे। डॉ. बर्वे से मिले। डॉक्टर के मन में समाज के प्रति आस्था के साथ उत्साह भी था। लेकिन कुछ हद तक वे भी दुविधा में थे। लेकिन जादूटोना कर लोगों के पैसे बरबाद होने से पहले वे 'अंनिस' के कार्यकर्ताओं से सलाह-मशवरा करना चाहते थे। उनके मन में यह चिंता भी थी कि हम इस काम को किस प्रकार से निपटाएँगे।

छात्राओं की पाठशाला के मुख्याध्यापक, दत्तात्रेय कुलकर्णी, क्लास टीचर विमलाबाई शिंदे, पत्रकार पीरजादे और डॉक्टर के साथ कुछ अन्य लोग तुरंत इकट्ठा हुए। हमने विस्तार से जानकारी प्राप्त करनी शुरू की।

17 फरवरी दोपहर साढ़े चार बजे जब कक्षा चल रही थी, उस समय घटना घटित हुई। दस वर्ष की तनुजा जयसिंग माने के टीचर शिंदे को बताया, ''मेरी आँखों में कुछ चुभ रहा है।'' टीचर ने देखा तो आँखों की नीचे की पलकों के अंदर छोटे कंकड़ थे। टीचर ने उन्हें निकालकर फेंक दिया। फिर पंद्रह मिनट में वही शिकायत। फिर दो कंकड़। तनुजा का कहना था कि 'पाठशाला आते समय एक छात्र ने उस पर बालू फेंक दी थी।' टीचर ने उसी दिन डॉक्टर के पास जाने की सलाह दी थी। घरवाले उसे डॉक्टर के पास लेकर गए लेकिन डॉक्टरी जाँच में कुछ नहीं मिला। अगले दो-तीन दिन में ऐसे मामले बड़ी संख्या में सामने आए। तनुजा के पिता नहीं थे, माँ ससुराल में रहती थी और बचपन से ही उसे और उसकी छोटी बहन को नाना ने पाला-पोसा था। अगले पाँच दिन में कंकड़ की मात्रा थोड़ी-सी कम हुई। फिर नाना ने उसे कुछ दिन के लिए उसकी माँ के पास भेज दिया। तब कंकड़ों का आना पूरी तरह से बंद हो गया।

मार्च के पहले सप्ताह में तनुजा वापस आई। दुबारा तनुजा की आँखों में कंकड़ निकलने लगे और फिर तीसरी कक्षा में आँखों से कंकड़ बाहर आने की मानो संक्रामक बीमारी-सी फैल गई। चार-पाँच दिन में हर रोज दो-चार छात्राएँ जादूगरी के इस मामले की शिकार होने लगी। सावित्रा, संध्या, आशा डांगे, राजश्री, महिमा शेख, तबस्सुम काझी, स्वाति माने नामक आठ छात्राएँ इस मामले की शिकार हुई

थी। पहली कक्षा की होशियार छात्रा वैशाली फासे कुछ समय के लिए तीसरी कक्षा में आई और उसकी आँखों से भी कंकड़ निकलने लगे। ये कंकड़ कभी मिनट-मिनट में तो कभी पंद्रह-बीस मिनट के अंतराल पर बाहर आते। कुछ दिन कुछ छात्राओं में यह मात्रा कम-अधिक हो जाती। आँखों से बाहर आए छोटे आकार के कंकड़ों को टीचर डिब्बे में भरकर लाई थी। पाठशाला के साथ कुछ अभिभावकों के घर में भी यही हाल था। डांगे और शेख के पिताओं को अपनी बच्चियों की आँखों में उस समय कंकड़ नहीं दिखे जब वे खेलने के लिए घर से बाहर गई। लेकिन कुछ समय बाद बच्चियाँ खेल बीच में ही छोड़कर घर आई तब एक की निचली पलक के अंदर और दूसरी की दाईं आँख के किनारे से कंकड़ बाहर आया। पुलिस ने भी इसे देखा। लेकिन उसने 'यह हमारे बस की बात नहीं है' कहकर उसे नजरअंदाज किया।

गाँव के सरपंच, जिला परिषद के सदस्य और जिला परिषद के शिक्षा सभापति बड़ी जिज्ञासा से पाठशाला पहुँचे। उनके सामने भी छात्राओं की आँखों से पत्थर बाहर आए। अब पाठशाला की जगह बदलने की अर्जी ऊपर तक भेजी गई। अस्थायी इलाज के रूप में तीसरी की कक्षा नाथ के दत्त मंदिर में शुरू की गई। लेकिन इससे कुछ लाभ नहीं हुआ। कुछ लोगों ने गाँव के कुलदेवता से सहायता माँगी। उसने 'मामला बाहर का है, कल सुबह तक मैं जादूगरी को बंद कर दूगाँ।' ऐसा वचन दिया। लेकिन मामला रुका नहीं। लड़कियों के गले में टोटके बाँधे गए। गाँव के एम. बी. बी. एस. डॉक्टरों तथा प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र के अधिकारियों ने जाँच कर स्पष्ट तथा लिखित अभिप्राय वरिष्ठ अधिकारी के पास भेज दिया कि 'यह मामला जादूगरी तथा चिकित्सा विज्ञान के बाहर का नजर आता है।' सांगली से जिला स्वास्थ्य अधिकारी तथा सिविल सर्जन भी जाँच करने पहुँचे। डॉक्टरों के आने से पूर्व दो घंटे यह मामला बंद रहा। उनके आने के आधे घंटे बाद तक कंकड नजर नहीं आए। डॉक्टरों ने टॉर्च के उजाले में, दोनों पलकों को खिचंकर आँखों की जाँच की लेकिन कंकड़ नजर नहीं आए।

इतने में दो लड़कियाँ, 'कंकड़ आया, कंकड़ आया' कहते हुए आँखों पर हाथ दबाए आगे आईं। देखा तो आँख के कोने में चोटा कंकड़ था। डॉक्टर अगली जाँच के लिए इन कंकड़ों को सांगली ले गए। तनुजा माने के नाना ने कराड के नेत्ररोग विशेषज्ञ से भेंट की। एक्स-रे निकाले गए। लेकिन उचित निदान न होने से 'आँख आने' की बीमारी समझ उनकी दवा देकर उनकी विदाई की गई।

मुख्याध्यापक, कक्षाध्यापक, पत्रकार, अभिभावक तथा गाँव वालों को लगभग भरोसा हो गया था कि यह बाहर का मामला है। लेकिन बर्वे डॉक्टर द्वारा हमें बुलाने के कारण लोग मजबूर नजर आ रहे थे। मजे की बात यह थी कि यह सारा मामला जिनके साथ घटित हो रहा था, वे लड़कियाँ मजे में थीं। उन्हें इस मामले का न डर था न चिंता। कक्षा में उनकी आँखों से पंद्रह-बीस छोटे-बड़े कंकड़ निकलते थे और यह आदत सी बन गई थी। यह सब कुछ होते हुए भी टीचर का पढ़ाना जोर-शोर से जारी था।

लोग मान रहे थे कि जादूगरी की शक्ति विज्ञान से ज्यादा है। डॉक्टरों द्वारा घुटने टेकने पर यह शक्ति विज्ञान को भी ताक पर रखने वाली है, ऐसा उन्हें लगने लगा था। कक्षा में टीचर के रहते इतनी लड़कियाँ कोई तिकड़म करेंगी ऐसी संभावना पर किसी का विश्वास नहीं था। नौ-दस वर्ष की, कक्षा तीसरी की मासूम लड़कियाँ पाठशाला और स्कूल में कुछ करेंगी, यह पूर्णत: असंभव था। कुछ समय के लिए इसे सच मान भी लिया जाए तो किसी की भी आँख से दिखाई न देने वाला कंकड़ यहाँ अचानक कैसे आ पहुँचा, यह उन्होंने अपनी आँखों से देखा था। यह प्रत्यक्ष प्रमाण हमारे अनुमान से कहीं ज्यादा उनके लिए महत्वपूर्ण था। आँख का नाजुक होना, नौ-दस साल की लड़की को भी पता होता है। लेकिन लड़कियों का इस प्रकार से बर्ताव करना अनुमान के बाहर का था। ऐसे झट-पट कंकड़ों के निकल आने से किसी की भी आँख को चोट न लगना और भी विस्मयकारी था, इसके बजाय अमावस के दिन शुरू हुआ यह खेल 'बाहर का' होने की बात ज्यादा तर्क युक्त लगने लगी थी। कुछ लड़कियाँ बतातीं कि 'हमें काली आकृति दिखाई दी। उसने हमें बुलाया लेकिन हम नहीं गए, इसके बाद यह सब शुरू हुआ।' कोई बताती थी कि पाठशाला आते समय अचानक किसी ने आँख पर धूल फेंकी थी, तो कुछ का मानना था कि नींद में कोई इन कंकड़ों को उनकी आँखों में डालता है। 'इसमें से कुछ तथ्य होगा और उस पर उसी प्रकार के इलाज करने होगें' की मानसिकता धीरे-धीरे सबकी तैयार होने लगी।'

फिर भी प्रारम्भिक चर्चाओं से हमारे अनुमान को पुष्ट करने वाली कुछ बातें इस तरह हैं :

1. इन कंकड़ों के कारण आँख को चोट लगेगी,

इसका थोड़ा-सा भी डर किसी भी लड़की को कभी भी नहीं लगा था।

2. ये सारी लड़कियाँ एक ही कक्षा की और एक-दूसरे की सहेलियाँ थी।

3. इनमें से पाँच लड़कियाँ तो कक्षाध्यापिका के अनुसार मंदबुद्धि थी। परीक्षा नजदीक थी और जबरन तीसरी कक्षा तक आई इन लड़कियों को ढंग से एक पंक्ति भी लिखनी नहीं आती थी।

4. पहले एक ही लड़की के बारे में यह बात शुरू हुई। इसके पंद्रह दिनों बाद हर दिन दो नई लड़कियाँ इसमें शामिल होने लगीं।

5. सांगली से आए डॉक्टरों ने आँखों की जाँच करने वाले किसी भी उपकरण के बिना केवल टॉर्च से आँख की जाँच की थी।

6. सभी के कंकड़ लगभग एक ही प्रकार के तथा अधिकतर छोटे थे।

7. किसी को गलती से भी लड़कियों पर शक नहीं हुआ। इसी कारण इस मामले में चर्चा, जिज्ञासा, लड़कियों के प्रति दया, हमदर्दी, प्यार-दुलार चल रहा था।

8. अधिकांश समय दाईं आँख से ही कंकड़ बाहर आए थे। सभी लड़कियाँ दाएँ हाथ से ही लिखती थीं।

9. चिकित्साशास्त्र में आँख की संरचना में क्या वह संभव है, इसका किसी ने भी विचार नहीं किया था। मानसोपचार विशेषज्ञों की मदद नहीं ली गई थी।

10. प्रत्यक्षत: दस लड़कियों की आँखों से कंकड़ आए थे। लेकिन खबरों में पच्चीस लड़कियों की आँख से ऐसा होने की बात लिखी थी। खबरों के अनुसार इसकी शुरूआत भी एक दिन में न होकर क्रमश: हुई थी। कंकड़ ऊबड़-खाबड़ न होकर चिकने थे। सभी लड़कियाँ ठीक ढंग से पाठशाला में आती थी।

हमने प्रत्यक्ष जाँच के लिए एक समय केवल दो लड़कियाँ को बुलाया। चर्चा होने पर ये लड़कियाँ अन्य लड़कियों से न मिलें इसलिए उन्हें घर के पीछे के आहाते में रोककर रखा। हमारे कार्यकर्ता उनके साथ अनौपचारिक गपशप करते रहे ताकि और कुछ जानकारी प्राप्त करने का प्रयास किया जाए। सारे साक्षात्कार खत्म होने तक उन्होंने लड़कियों को हँसते-खिलखिलाते उलझाकर रखा। कुछ उपयुक्त जानकारी भी प्राप्त की। प्रसन्न दाभोलकर ने पाँच और मैंने चार लड़कियों से बाचचीत की। कक्षा पहली की लड़कियों से भी हमने बातचीत की। सभी लड़कियाँ नौ-दस वर्ष की, नन्ही सी, मासूम थीं। इन पर संदेह करना भी ठीक नहीं लगता था। हम कभी हँसते-खिलखिलाते प्रेम से बोलते, तो कभी हाथ पकड़कर धमकाते, इस प्रकार से आवश्यकता के अनुसार यह बातचीत हुई। इसे साक्षात्कार ही कहना होगा क्योंकि हर एक से आधे घंटे तक चर्चा चली। मैंने सबसे पहली जिसकी जाँच की, वह सावित्री भानुदास माली तो बहुत ही कठोर निकली। उसने यही रट जारी रखी कि उसे पता नहीं कि कंकड़ कहाँ से आते हैं। सिर्फ आज से कंकड़ आने बंद होने का आश्वासन मैं उससे प्राप्त कर सका।

अन्य लड़कियों से भी बातचीत की। उसमें सबसे महत्वपूर्ण बातचीत तनुजा मानसिंग राव माने से रही। दस एक मिनट तक वह झूठ बोलती रही, लेकिन इसके बाद वह जोर-जोर से रोने लगी। तनुजा उम्र और कद में छोटी थी। व्यसनाधीनता से उसके पिता की मृत्यु हुई थी। माँ से दूर तनुजा नाना के पास अकेली रहती थी। उसे सयानी मानकर उसके ऊपर घर के काम सौंप दिए गए थे। उससे छुटकारा नहीं था। यह सब करने पर भी बीच-बीच में उसे मार सहनी पड़ती। इस प्रकार का काम और मारपीट, गाँव में इस उम्र की लड़कियों के जीवन का अभिन्न अंग था। यह सब बर्दाश्त करते हुए ही वे बड़ी होती थी। इसी कारण इस पूरे मामले में घरवालों को कुछ गलत नहीं लगता। लेकिन इस प्रकार से तनुजा निराश तथा हताश हुई। एक दिन खेलते समय एक लड़की ने उस पर धूल फेंक दी। कुछ घंटे बाद उसे ऊपरी पलक के नीचे कुछ चुभने जैसी अनुभूति हुई। उसने आँख के कोने में दबाया तो कंकड़ नीचे गिर पड़ा। उसने उसे आँख में डाला, लेकिन आँख में कुछ भी पीड़ा नहीं हुई। पाठशाला में दुबारा उसने वही किया। एक बार आँखों की बगल की कोर में, एक बार नीचे। पहले दिन उसने यह चुपके से दो बार किया। फिर आगे कई बार। इस तरह करते रहने से देखते-ही-देखते उसकी यह जादूगरी चल निकली। इससे घर का काम तथा मार कम हुई। उसकी ओर देखने का हमदर्दी का सिलसिला आरम्भ हुआ। परीक्षा नजदीक आने पर उसे माँ के पास भेज दिया गया। माँ के पास जाने के बाद उसकी जादूगरी बंद हो गई थी। दुबारा कडेगाँव आने पर तनुजा ने जादूगरी दुबारा शुरू की। बाद में उसने यह भी माना कि 'ये कंकड़ मैं पाठशाला के कूड़े-करकट के ढेर से ले लेती। अभी आते समय तीन कंकड़

आँख में डालकर आई हूँ', ऐसा बताकर नीचे की पलक के अंदर की ओर से चावल के आकार के तीन कंकड़ निकालकर उसने हमें दिखाए।

यह सब बताने के बाद वह जोर–जोर से रोने लगी। अचानक एक अजीब सा समा बँध गया। नजदीक रखे तकिए पर वह पंद्रह मिनट तक लेटी रही। आँखों से कंकड़ आने का यह रहस्यमय तरीका अपनी ओर ध्यान आकर्षित करने का तथा हमदर्दी प्राप्त करने का जरिया है, यह ध्यान में आने पर धीरे–धीरे और अन्य लड़कियों ने भी इसे अपनाया। उन्होंने इसे किसे दिखाया और यह किसने सिखाया आदि संबंधी जानकारी भी लड़कियों ने हमें दी। इस प्रकार से आँखों को चोट नहीं लगती, इसका भरोसा रहने पर बड़े उत्साह से वे दिन में पंद्रह–बीस बार यह खेल करती रहीं।

टीचर के कक्षा में रहने के दौरान भी 'कंकड़ आया, कंकड़ आया' कहते हुए ये लड़कियाँ आँखों से कंकड़ निकालकर दिखाती रहतीं। हर पाँच मिनट में किसी न किसी की आँख से कंकड़ जरूर बाहर निकल आ जाता। हर समय पढ़ाना बंद कर यह देखना टीचर के लिए संभव नहीं था। अधिकतर कंकड़ नीचे की पलक के अंदर छिपे हुए नजर आते थे। अधिकतर लड़कियाँ अधिकांश समय कंकड़ अपनी आँखों में रखती थीं और तुरंत निकालकर दिखा देती थीं। कुछ लड़कियाँ तो आँख के कोने से ऊपर की खाँच में कंकड़ रखतीं। कई बार तो आँख मलने का नाटक ही काफी होता। फिर हाथ में ही रखा हुआ कंकड़ आँख से निकला हुआ कहकर दिखाया जाता। इससे कुछ हत तक बड़े कंकड़ दिखाना भी संभव होता। अपने अनूठेपन को मान्यता मिलने के लिए वे यह सब करती रहतीं। यह एक तरह से सबका ध्यान अपनी ओर आकर्षित करने का बहाना था। आँख पोंछने हेतु फ्रॉक की नोक बनाकर आँख में घुमाने का नाटक करते हुए पत्थर आँख में रखा जाता। लड़कियों के कबूल किये जुर्म का सारांश लगभग इस प्रकार का था। लड़कियाँ ऐसा कुछ करेंगी, इसका टीचर को बिल्कुल अंदाजा नहीं था। जादूगरी का मामला होगा, इसकी जाँच के झमेले में क्यों फँसे? इस भावना के कारण इस सारे मामले के प्रति चिकित्सा की दृष्टि से किसी ने भी कभी देखना आवश्यक नहीं समझा।

तनुजा माने के साथ अन्य लड़कियों के यह सब स्वीकार करने के बाद उन्होंने हमें यह सब कर दिखाया। सईदा शेख ने आँखों के ऊपर की खाँच में बड़ी सफाई से कंकड़ बिठाकर दिखाया। आँखों के दोनों छोर खिचंकर और अंदर टॉर्च से देखकर भी डॉ. बर्वे को वह नजर नहीं आया। दस मिनट बाद उसने पलकें और पास के स्नायु मलकर उसे बाहर निकाला। हमने हेडमास्टर कुलकर्णी को अंदर बुलाया। लड़कियों को कहकर दुबारा ऐसा न करने की बात उनसे कबूल करवाई। 'कंकड़ों का आना आज से बंद हो जाएगा, आगे मैं आँख में कंकड़ नहीं डालूँगी, मुझे सजा मत दीजिए'–का बयान लिखकर उस पर अपने दस्तखत कर उन्होंने कागज हमें दिए। तनुजा ने यह भी लिखकर दिया कि 'मुझे बर्तन माँजने, कपड़े धोने का काम न दिया जाए, मुझे न मारा जाए। मैं आँखों में कंकड़ डालना बंद कर दूँगी।'

दोपहर में ग्राम पंचायत में अभिभावक, शिक्षक तथा प्रमुख गाँव वालों की बैठक बुलाई गई। खाना खाकर हम वहाँ पधारे। इस मामले की तहकीकात करने सांगली के सिविल सर्जन द्वारा भेजे गए नेत्ररोग–चिकित्सक प्रा. आयचित अपनी टीम के साथ हमसे पहले ही वहाँ पहुँच गए थे। उन्होंने संबंधित लड़कियों की जाँच करना, उनकी आँखों की तस्वीरें लेना जैसी बातें शुरू की थी। हम उनसे मिले। हमने अपना निष्कर्ष उन्हें बताया। हमारी इस खोज से वे उत्साहित नजर नहीं आए। सरकारी पद्धति से रिपोर्ट तैयार करने में उनकी रूचि थी।

हम संयुक्त रूप से इसे लोगों के सामने रखेंगे, इसकी चर्चा कर ही रही थे कि कुछ लोग सईदा शेख को लेकर दरवाजा खोलकर अंदर घुस आए। 'अभी भी इसकी आँखों से कंकड़ निकल रहे हैं' का शोर उन्होंने जारी रखा। उसने हाथ नीचे करके कंकड़ दिखाया। इसके बाद उसने मेरी ओर देखा। वह थोड़ी–सी शरमाई। कमरे में जाँच के लिए सावित्री माली और तनुजा माने बैठी थी।

मैंने सईदा के साथियों को बाहर भेज कर दरवाजा बंद कर लिया। तनुजा की पीठ पर प्यार से हाथ फेरकर, सहलाते हुए कहा, ''तुम समझदार हो, यह कंकड़ लो और कुछ देर पहले हमें जो दिखाया, उसे फिर एक बार दिखाओ।''

उसके झट से कंकड़ हाथ में लिया, पलक को नीचे खींचकर उसने वह अंदर रखा। इससे सईदा शरमाई। उसने भी एक कंकड़ आँख में रखकर दिखाया।

हम सारे उठकर ग्राम पंचायत के हॉल में आए। बैठक सभा में बदल चुकी थी। कई सारे गाँव वाले, महिलाएँ, शिक्षक इकट्ठे हुए थे। बरामदे में हाई स्कूल के छात्र एक दूसरे से सटकर खड़े थे। कोलाहल के साथ कुछ नरम–गरम

चर्चा आपस में जारी थी। उन तक आधी-अधूरी जानकारी पहुँच चुकी थी। इसके कारण उनकी जिज्ञासा बढ़ गई थी। शोरगुल बढ़ रहा था। कुछ लोगों का मानना था कि अंधश्रद्धा निर्मूलन के कार्यकताओं को सब कुछ झूठ ही लगता है। कुछ लोगों के मन में बुनियादी आंशकाएँ थीं। उन्हें इसके जवाब चाहिए थे।

सर्वप्रथम डॉ. बर्वे ने अपना मंतव्य दिया। उन्होंने इस प्रकार से निवेदन किया, 'सांगली के डॉक्टरों ने जाँच की है और सतारा के शिष्टमंडल ने फिर से जाँच की है। सारी बातें देख-सुन ली गई हैं। हम उनकी भी सुनेंगे। यदि हमें जँच गया तो उससे अभिभावकों के मांत्रिक को जाने वाले पैसे तथा मानसिक क्लेश दोनों बच जाएँगे। इसलिए मैंने यह दौड़ धूप की है। हमें किसी भी हालत में इसे रोकना है। इससे सभी की पीड़ा खत्म होगी।'

उनके बाद मैंने अपनी राय रखी। जिसे जादूगरी कहा जाता है, उसकी सच्चाई क्या होती है, उसमें क्या घटित होता है, यह मैंने उन्हें समझाया। यह कौन और कैसे करते थे, इसका हमें पता लगा है और उनसे आगे ऐसा न करने का आश्वासन भी हमें मिला है। इसके आगे ये मामले बिलकुल बंद होने का भरोसा हमने लोगों को दिया। लेकिन किस वजह से लड़कियों ने यह किया, यह हम बिल्कुल भी नहीं बताएँगे, क्योंकि सारे गाँव के आगे लड़कियों का पंचनामा उचित नहीं होगा। यह हमें नहीं चाहिए। यदि किसी भी अभिभावक को इसे जानने की इच्छा है तो वे अपनी लड़की के साथ सतारा आ जाएँ। हम जरूर उसका समाधान करेंगे।

कंकड़ जैसी वस्तु के घर्षण से भी आँखों में कुछ तकलीफ नहीं होती, यह कैसे संभव है? आँख की थैली में जो अंत: त्वचा रहती है, उसमें से पानी रिसता है, उसका उपयोग स्नेहक जैसा होता है। कभी-कभी महीने डेढ़-महीने तक कंकड़ अंदर रहने पर भी व्यक्ति को उससे पीड़ा नहीं होती। किसी विशिष्ट उद्देश्य से अंदर कुछ डालने पर तो बिलकुल नहीं। सही ढंग से पूछने पर बचपन में खेलते समय आँख में गुंजा डालने की बात बताने वाली मध्य उम्र (प्रौढ़) महिलाएँ आपको मिल जाएँगी। कभी अपने आप, तो कभी पलक और बगल के स्नायु को दबाकर यह कंकड़ बाहर आता है, नहीं तो नेत्ररोग-विशेषज्ञ इस कंकड़ को बड़ी सहजता से निकालते हैं। पलकों के अंदरवाला हिस्सा लाल होने के बावजूद कंकड़ बाहर आते समय भी कुछ पीड़ा नहीं देता। आँखों पर टॉर्च से उजाला करने तथा दोनों पलकों ऊपर-नीचे खींचने पर भी कंकड़ नजर नहीं आता। यह तो डॉ. बर्वे ने दिखाया ही है। इसी कारण आपकी आशंकाएँ मानने पर भी शास्त्रीय जानकारी के आधार पर ही उन पर फैसला होता है। इतनी छोटी लड़कियाँ ये कैसे कर सकती हैं? इसलिए इसे जादूगरी कहना बिलकुल गलत है। विज्ञान बताता है कि आँखों में इस प्रकार के बालू के कण कभी तैयार नहीं होते। इससे आंशका बनी रहती है कि लड़कियों ने या तो स्वयं या किसी दूसरे ने उनकी आँखों में कंकड़ डाले होंगे। यह धोखा है। अनपेक्षित व्यक्ति से मिलने तथा मूर्ख बनाने से आपको जरूर सदमा पहुँचा होगा, लेकिन सत्य इससे बदल नहीं जाता।

लड़कियों ने ऐसा लिखकर भी दिया है। आखिरी मुद्दा है कि क्या दुबारा कभी भी नहीं होगा? इसके बारे में मानसोपचार विशेषज्ञ आपको बताएँगे।

प्रसन्न दाभोलकर ने उठकर उसके मानसिक पक्ष को स्पष्ट किया, ''कुछ लड़कियाँ बीच-बीच में संभवत: और भी इसे कर सकती हैं। कुछ लड़कियों के बारे में संभवत: घिग्घी बँधना, चक्कर आने जैसी कुछ अन्य बातें भी घटित होगी, लेकिन आप चिंता, चर्चा तथा फिक्र न करें। लड़कियों के ऐसे बर्ताव पर उन्हें मत डाँटे तथा बार-बार कुरेद-कुरेदकर वही प्रश्न मत पूछें। यह निश्चित तौर पर थम जाएगा और वैसा कुछ लगा तो कभी भी लड़कियों के साथ सतारा आ जाएँ, बाकी बची जादूगरी को हम ज़रूर भगाएँगे।''

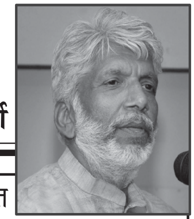
सभा खत्म होने पर हम तनुजा के नाना से मिले जो समझदार थे। वे पूर्व हेडमास्टर रह चुके थे। इस सारे मामले में सबसे अधिक परेशानी उन्हें ही हुई थी। तनुजा की घर में होने वाली दुविधा का अहसास उन्हें भी हुआ था। उन्होंने इसमें बदलाव का भरोसा दिलाया।

हेडमास्टर जी को पाठशाला की जगह की फिक्र थी। वे जगह बदलने की अर्जी दे बैठे थे। सचमुच यदि जगह बदलती तो किसी असुविधाजनक जगह पर जाने की नौबत आती। हमारे जाते समय उन्होंने नजदीक आकर कहा, 'अब पाठशाला की जगह बदलने की आवश्यकता नहीं है ना? आप ऐसा लिखित रूप में देंगे तो अच्छा रहेगा।'

हमने कहा, 'क्यों नहीं!'

(स्रोत : पुस्तक 'अंधविश्वास उन्मूलन''-आचार (दूसरा भाग) संपादक : डॉ. सुनील कुमार लवटे, अनुवादक: प्रकाश कांबले)

मन्मथनाथ गुप्त-एक नास्तिक क्रांतिकारी का सफर



- सुधीर विद्यार्थी

ईश्वर का नकार हमें मनुष्य होने और मनुष्यों से भरे पूरे समाज की रचना की ओर प्रेरित करता है, भय का ही दूसरा नाम ईश्वर है जो बार बार हमारे सामने खड़ा किया जाकर मनुष्यता का मार्ग अवरूद्ध करता है, धर्म आदमी के पैरों में पड़ी हुई बेड़ियों के सिवा कुछ नहीं है, असली लड़ाई धर्म और ईश्वर के खिलाफ होनी चाहिए जिस ओर से हम बार बार अपनी पस्तहिम्मती के चलते मुंह मोड़ लेते रहे हैं, इस संदर्भ में भारतीय क्रांतिकारी संग्राम में धर्मनिरपेक्षीय चिंतन की अवधारणा को स्थापित करने के लिए 'गदर पार्टी' के योगदान को गहराई से रेखांकित करने की बड़ी ज़रूरत है, दूसरी ओर उसे नास्तिकता से जोड़कर आगे बढ़ाने के लिए मन्मथनाथ गुप्त, मणींद्र नाथ बनर्जी, क्रांतिकारी राधामोहन गोकुल और भगत सिंह के चिंतन और कोशिशों को एक सूत्र में पिरोकर देखने से हम उस विकास प्रक्रिया को भी समझ सकते हैं जिसके बिना सचमुच के समाजवादी धर्म निरपेक्षीय समाज की संरचना नहीं की जा सकती।

भारत का मुक्तियुद्ध का दीर्घ संघर्ष जिन पड़ावों से होकर गुजरा वह उसकी वैचारिक चेतना के विकास का जीवंत साक्ष्य है। सतावनी क्रांति (1857) के बाद आजादी के लिए चल रहे इस समझौता विहीन संघर्ष के जिस दूसरे दौर की शुरूआत असहयोग आंदोलन की असफलता के बाद 'हिंदुस्तान प्रजातंत्र संघ' (हिप्रसं) के निर्माण की प्रक्रिया से शुरू हुई, वह अपने लक्ष्य और उद्देश्यों के लिए ज्यादा मुखर और जनपक्षीय पक्षधरता के साथ निरंतर आगे बढ़ता दिखाई देता है।



गदर की धर्मनिरपेक्षता

कहना यह भी चाहिए कि 'हिप्रसं' के गठन से पूर्व अमरीका की धरती पर बनी 'गदर पार्टी' ने अपने ज्यादा जनोन्मुखी और धर्म निरपेक्षीय सिद्धातों के साथ संघर्ष की इबारत को रच बुनकर इतिहास में जो मुकाम तय किया वह अपने में अनोखा है, लाला हरदयाल, सोहन सिंह भकना, करतार सिंह सराभा जैसे क्रांतिकारी व्यक्तित्वों ने संघर्ष और विचार के जिस ताने बाने को रचा वह सचमुच बहुत रोमांचकारी है। इसी की कड़ी है 'गदर' अखबार का प्रकाशन जिनसे उस कठिन समय में दुनिया के अधिकांश देशों में ब्रिटिश साम्राज्यवाद के खिलाफ़ भारत की मुक्ति की आकांक्षा के प्रयासों को आवाज दी। इसे इस रूप में देखा ही जाना चाहिए कि 'गदर पार्टी' का यह संपूर्ण आंदोलन 1857 के गदर कहे जाने वाले प्रथम स्वतंत्रता संग्राम से प्रेरित था।

एक सदी का समय बीत जाने के बाद भी हमें यह जानना सबसे ज्यादा चकित करता है कि यह गदर आंदोलन बेहद सुचिंतित और बेहद व्यवस्थित संग्राम था यहां हम 'गदर पार्टी' के संविधान और नियमावली पर संक्षेप में बात करना जरूरी समझते है क्योकि धर्मनिरपेक्षता की सही नींव रखने वाले क्रांतिकारी इसी दल के कारकुन थे जिनकी बनाई जमीन पर ही आगे चलकर मन्थनाथ गुप्त और भगत सिंह सरीखे युवा क्रांतिकर्मियों ने नास्तिकता का पौधा रोपा। 'गदर पार्टी' की नियमावली कुछ इस तरह थी :

* आजादी का हर इच्छुक बिना जाति या देश भेद के 'हिंदुस्तानी एसोसिएशन' में शामिल हो सकता है।

* 'गदर पार्टी' के हर सिपाही का परस्पर कौमी रिश्ता होगा, न कि धार्मिक, न ही कभी 'गदर पार्टी' में धार्मिक चर्चा को स्थान दिया जाएगा। कोई भी धार्मिक विचारों को लेकर 'गदर पार्टी' में शामिल नहीं हो सकेगा। हर भारतीय, भारतीय होता हुआ और हर मनुष्य, मनुष्य के नाते इसका सदस्य बन सकेगा।

* खाने पीने की सबको छूट होगी। भले ही कोई मांस खाए या सब्जी, गाय या सूअर, हलाल या झटका, उसकी आजादी में हस्ताक्षेप करने का किसी को अधिकार नहीं होगा।

* एसोसिएशन का राष्ट्रीय गीत 'वंदेमातरम्' होगा।

क्रांतिकारी संग्राम और साम्यवाद

यही विचार और आदर्श आगे चलकर क्रांतिकारी संग्राम की जमीनी सच्चाई बने। हम यहां से हिप्रसं के उस संविधान की ओर ध्यान आकृष्ट करना चाहते हैं जिसे क्रांतिकारी दल के नेता शचींद्रनाथ सान्याल ने रचा जिसमें उन्होंने स्पष्ट कहा कि सुसंगठित और सशस्त्र क्रांति के द्वारा भारतीय प्रजातंत्र की स्थापना करना इस दल का ध्येय होगा। इस प्रजातंत्र संघ में उन सब व्यवस्थाओं का अंत कर दिया जाएगा जिनसे किसी एक मनुष्य द्वारा दूसरे का शोषण हो सकने का मौका मिल सकता है।

हम जानते हैं कि सान्याल जी का झुकाव अध्यात्म की ओर था। पर इस मामले में वे निरे कठमुल्ले् नहीं थे। दिल्ली कांग्रेस के अधिवेशन के बाद जब उन्होंने अपने दल का नाम 'हिंदुस्तान रिपब्लिकन एसोसिएशन' यानी 'हिंदुस्तान प्रजातंत्र संघ' रखा, तब ही कुतुबुद्दीन नाम के एक युवक से उनका परिचय हुआ जो मानवेंद्रनाथ राय से जुड़े थे। राय ने सान्याल जी को मास्को बुलाया था जहां कम्युनिस्ट इंटरनेशनल कांग्रेस होने जा रही थी। राय का यही संदेश लेकर कुतुबद्दीन दिल्ली आए। तब कम्युनिज्म को लेकर सान्याल जी और कुतुबद्दीन की बहुत-सी बातें हुई थीं। वही वार्तालाप बेहद दिलचस्प और जानने योग्य भी, मैं यहां सिर्फ इतना कहना चाहता हूं कि सान्याल जी न तो राय से मिलने रूस गए और न ही वे कुतुबुद्दीन से हुई लंबी चर्चा में कम्युनिज्म के सिद्धांतों से पूरी तरह सहमत हो पाए पर इस विचार संपदा में उन्हें जो अच्छा और मौजूं लगा, उसे स्वीकार करने में भी सान्याल जी ने कोई संकोच नहीं किया। इस विषय में उन्होंने खुद सत्यभक्त जी (कानपुर में प्रथम कम्युनिस्ट कांफ्रेस के आयोजक) से कई दिन लंबी चर्चा की और उनके पास उपलब्ध कम्युजिन्म पर बहुत-सी पुस्तकें भी उन्होंने पढ़ डाली। सान्याल जी 'बंदी जीवन' में खुद कहते हैं कि अपने क्रांतिकारी दल का गठन करते समय उन्होंने कम्युनिस्ट सिद्धांत के बहुत अंशो को स्पष्ट शब्दों में ग्रहण कर लिया था। यह उनके क्रांतिकारी व्यक्तित्व का खुलापन था।

लखनऊ के निकट काकोरी में 9 अगस्त

1925 को रेल रोक कर रामप्रसाद बिस्मिल के नेतृत्व में दस नौजवानों ने सरकारी खजाना लूट लिया तो सब तरफ हड़कंप मच गया। ब्रिटिश हुकूमत पर राजनीतिक हमला मामूली नहीं था। यह हि.प्र.स. का एक सुनियोजित प्रयास था। इस मामले में 40 से ऊपर क्रांतिकारी सरकार की गिरफ्त में आ गए। सान्याल जी भी पकड़े गए और बाद उन्हें इस षड़यंत्र का नेता भी माना गया। बिस्मिल आर्यसमाजी विचारों से होते हुए क्रांतिकारी चेतना के इस मुकाम तक चल कर आए थे और सान्याल जी के अध्यातम की ओर झुकाव वाले पक्ष से भी दल के सदस्य सुपरिचित थे। फिर भी काकोरी के दिनों में क्रांतिकारियों के मध्य अनीश्वरवाद पर विमर्श चालू हो गया था। ईश्वर पर अस्तित्व के विपक्ष में तब जिन नौजवान क्रांतिकारियों की मुखरता सामने आ रही थी,उनमें राजेंद्रनाथ लाहिड़ी और मन्मथनाथ गुप्त के नाम हैं। दोनों ही काशी के रहने वाले थे। यह जरूर हुआ कि थोड़ा आगे चलकर लाहिड़ी अनीश्वरवाद से छिटक गए, लेकिन मन्मथनाथ गुप्त चिंतन के उस धरातल पर पहुंचकर फिर लौटे नहीं. उनका अनीश्वरवाद उनके जीवन के अंतिम दिनों तक बरकरार रहा। बाद के समय में इस पर उनकी आस्था दृढतर होती चली गई।

मरते दम तक नास्तिकता

याद किया जाना चाहिए कि काकोरी के घटनाक्रम के बाद उत्तर भारत के चार बड़े क्रांतिकारी बिस्मिल, लाहिड़ी, अशफाक उल्ला और रोशनसिंह की फांसियों के बाद अन्य सजायाफ्ता क्रांतिकारी जेलों में सजा काट रहे थे। उन्हीं दिनों फतेहगढ़ केंद्रीय कारगार में अनशन से मणींद्रनाथ बनर्जी की शहादत हुई थी। यह घटना 20 जून 1934 की है जब उसी जेल में कैद मन्मथनाथ गुप्त की गोद में मणींद्र ने अपनी अंतिम सांस ली। यशपाल भी तब वहीं थे। मणींद्र के अंतिम क्षण उनके और मन्मथनाथ के भीतर मौजूद अनीश्वरवादी विचार संपदा का सबसे बड़ा साक्ष्य बनकर हमारे सामने उपस्थित हैं।

मणींद्र मरणासन्न थे, वे कुछ खा-पी नहीं रहे थे और मौत उनके बहुत करीब आकर खड़ी हो गई थी। उनकी काया बहुत जर्जर हो गई थी। खबर लगते ही मन्मथनाथ जेल की अपनी बैरक से उनके पास दौड़कर पहुंचे और उठाकर गले से लगा लिया। मणींद्र ने अपने जीवन के अंत की ओर संकेत किया, मन्मथनाथ ने उन्हें ढाढ़स बंधाते हुए काकोरी केस के दौरान दामोदर स्वरूप सेठ और राजकुमार सिन्हा के बरेली जेल में अनशन के मध्य मरणासन्न हो जाने लेकिन पुनः स्वस्थ होकर कार्यक्षेत्र में लौट आने का जिक्र किया बावजूद इसके मणींद्र को इन बातो से किसी तरह

सुकून नहीं मिल रहा था। उनके हाथ पैर शिथिल पड़ रहे थे और दृष्टिहीनता भी दबोचने लग गई थी। उनकी हालत लगातार गिर रही थी. फिर भी वे अनशन तोड़ने को तैयार नहीं थे, उन्हें दवा दी जा रही थी।

मन्मथनाथ भौतिकवादी थे पर उन क्षणों में वे मणींद्र के भीतर बचे दीपक को लौ को किसी भी तरह थोड़ा जगाना चाहते थे। मणीद्र एक समय ईश्वरवादी थे। अब नहीं थे, एकाएक मन्मथनाथ ने सोचा कि शायद उनके मानस में इस समय ईश्वर नाम की कोई बची हुई चिंगारी अभी दबी पड़ी हो और वह इस आड़े वक्त में उन्हें थोड़ा सहारा दें सके सो उन्होंने मणींद्र को खूब जोर से थामकर अपना भी समस्त भूतपूर्व ईश्वर-विश्वास बटोरकर कहा, 'हे भगवान, यदि तू है तो मणींद्र को रोगमुक्त कर। मणींद्र ने जाने या अनजाने से कभी किसी किस्म का दृष्कृत्य नहीं किया है।'

पर मणींद्र ने तो उन कठिन पलों मे भी इस प्रार्थना का प्रतिवाद किया। अंतिम समय में भी उनके भीतर कोई दुर्बलता नहीं थी। उन्होंने बीच में मन्मथनाथ को टोकते हुए (अंग्रेज़ी में) कहा, 'चुप-चुप! भगवान कहां है! न्याय कहां है! इस जगत में दुष्ट हमेशा सुख भोगते हैं और अच्छे लोग कष्ट सहते हैं।' मणींद्र की ओर से ईश्वर के इस तिरस्कार को सुनकर मन्मथनाथ की आकृति मलिन-सी हो गई है। हालांकि वे खुद अनीश्वरवादी थे।

मन्मथनाथ जी काकोरी की सजा से 1937 में छूटने के बाद भी जेल गए। आगे चलकर हिंदी के शीर्ष लेखको में उनका शुमार हुआ। करीब डेढ़ सौ किताबें हिंदी, अंग्रेजी और बंगला में लिखीं। अपने चिंतन और विचार यात्रा में वे जीवन के अंतिम समय तक प्रखर और सचेत क्रांतिकारी ही बने रहे। कह सकता हूं कि भगत सिंह के अनीश्वरवाद के वे हर पल घनघोर प्रचारक और पैरोकार थे। मेरा उनसे 28 साल का लंबा संग-साथ रहा और मैंने उन्हें हर मुकाम पर समझौताविहीन क्रांतिकारी ही पाया। वे कोई बार कहते थे कि अनीश्वरवाद या नास्तिकता कोई ओढ़ी हुई चीज नहीं है, जनेऊ के ऊपर कमीज पहन लेने से ही कोई धर्म निरपेक्ष और नास्तिक नहीं हो जाता। किसी के बेड रूम में झांक कर देखना चाहिए कि वह पूजा पाठ करता है या नहीं।

लंगड़ी धर्मनिरपेक्षता

इस मुद्दे पर मन्मथ नाथ कम्युनिस्ट दलों की बार बार आलोचना करते जिन्होंने अपने शासित राज्यों में भी जनता के बीच धर्म निरपेक्ष विचारधारा को विकसित करने का कोई सार्थक काम नहीं किया। बंगाल में कम्युनिस्ट मार्क्स का झंडा थामे रहे और दुर्गा पूजा का उत्सव भी मनाते रहे। इस लंगड़ी धर्मनिरपेक्षता और वाममार्गी प्रगतिशीलता के वे कटु आलोचक थे। शायद इसी कारण उनका अनेक बार कम्युनिस्ट दलो और उनके लोगों से विवाद हो जाता रहा और वे उनके निशाने पर भी आ जाते रहे।

भगत सिंह

मन्मथनाथ जी जोर देकर कहा करते थे कि काकोरी की फांसियों के समय बिस्मिल गीता और अशफाक उल्ला कुरान हाथ में लेकर तख्त-ए-शहादत की ओर गए। लेकिन भगत सिंह फांसी घर की तरफ प्रस्थान करने से पहले लेनिन की जीवनी पढ़ रहे थे और उन्होंने 'इंकलाब जिंदाबाद' का उद्घोष किया। सवाल नास्तिकता के उस चिंतन का है जो कमोबेश राजेंद्र लाहिड़ी और फिर मन्मथनाथ से होता हुआ राधामोहन गोकुल और भगत सिंह तक पहुंचकर पूर्ण उपसंहार बनकर क्रांतिकारी आंदोलन को सचमुच का धर्म निरपेक्षीय जामा पहनाने में कामयाब हुआ।

मन्मथनाथ जी हमेशा देश, समाज और दुनिया की सम्स्याओं का समाधान समाजवादी और धर्म निरपेक्षीय व्यवस्था में ही देखा करते थे। हम यह भी मानते हैं कि सही अर्थों में धर्मनिरपेक्षता बिना नास्तिकता के संभव ही नहीं है। यह राह मुश्किल जरूर है, लेकिन यही एकमात्र राजनीतिक युक्ति है जो समाज के भीतर धर्म और महजब के नाम पर होने वाले हिंसक युद्धों से हमें मुक्ति दिला सकती है।

ईश्वर है ही नहीं

मुझे याद आता है कि 1993 में मेरी पत्नी के निधन के बाद मन्मथनाथ जी का एक पत्र मेरे पास आया जो किसी और सज्जन की लिपि में था। हस्ताक्षर उनके थे। लिखा था उन्होंने, 'जो सोचता था, वही हुआ। आप बुरी तरह फंस गए, कभी छुट्टी मिलेगी, ऐसा जान नहीं पड़ता, मनुष्य विवाह करे तो मुश्किल, न करे तो मुश्किल। बहुत दुख की बात है, पर हाल यही है, धीरे धीरे घाव भर जाएंगे, पर जो हानि हुई, वह पूरी नहीं होगी। इसी में से धीरे धीरे समय निकालकर काम करना पड़ेगा। लोग ऐसा मुसीबत में पड़कर ईश्वर की शरण लेते है, पर उससे कुछ लाभ नहीं होगा क्योंकि ईश्वर है ही नहीं' उसके बाद 26 अक्तूबर 2000 को जब दिल्ली में मन्मथनाथ जी ***शेष पृष्ठ 39 पर***

रौशनी के बीजों की तलाश

'विश्वास और अंधविश्वास' और 'विवेक की प्रतिबद्धता'

– स्वदेश कुमार सिन्हा

दाभोलकर की शहादत के बाद कई सारे कार्यकर्ताओं ने अंधश्रद्धा निर्मूलन समिति के कामों के लिए अपने की पूरी तरह से समर्पित कर दिया और उस मशाल को मजबूती से आगे बढ़ाया जिसे उन्होंने प्रज्वलित किया था। आखिर दाभोलकर के वे कौन से विचार थे जिसने तमाम लोगों को इस कदर प्रेरित किया कि उनकी शहादत के इतने वर्ष बीत जाने के बाद भी उनके विचारों की मशाल आगे बढ़ाने वाले लोगों की तादाद कम होने के बजाय बढ़ती जा रही है?

सत्य का प्रकाश उन लोगों की आंखों को कष्ट पहुंचाता है जो अंधेरे में रहने के अभ्यस्त हो चुके हैं, वैसे ही जैसे उल्लू के घोंसले में प्रकाश की एक किरण पड़ते ही वे चिचियाने लगते हैं

दिदरो

महान विचारक दिदरो का यह कथन उन लोगों पर बिलकुल सटीक बैठता है जिन्होंने महान तर्कशास्त्री और पूरे देश में वैज्ञानिक दृष्टिकोण की चेतना फैलाने में सक्रिय नरेंद्र दाभोलकर की हत्या 20 अगस्त 2013 की सुबह टहलते समय कर दी थी। उस दिन 11.30 बजे उनकी एक प्रेस कांफ्रेंस तय थी जहां उन्हें पर्यावरण अनुकूल गणेश मूर्तियों के मसले पर बात रखनी थी। अपने आप को सहिष्णु कहलाने वाले इस देश की जमीन पर तर्कशीलता और बुद्धिवाद की आवाज बुलंद करने वाले लोगों को बेशुमार खतरों से गुजरना पड़ता है। इस बात को हम बीते कुछ सालों के अंदर हुई हत्याओं से देख सकते हैं। प्रोफेसर कलबुर्गी, कॉमरेड गोविंद पनसारे और नरेंद्र दाभोलकर की हत्याओं का सिलसिला एक तरह से दाभोलकर से शुरू हुआ था। अभी तक इन हत्याओं की जांच से एक अतिवादी हिंदू संगठन का हाथ सामने आया है।

'काला जादू कानून'

अस्सी के दशक के अंतिम दौर में दाभोलकर अपनी मेडिकल प्रैक्टिस छोड़कर अंधश्रद्धा के खिलाफ मुहिम में लग गए थे। इस दौरान उन्हें अनेक बाधाओं, प्रताड़नाओं और हमले का शिकार होना पड़ा था। उन्हें पता था कि वे धर्म के ठेकेदारों द्वारा साधारण जनों की आस्था का दोहन करने वाले वे तत्व वे कभी भी उन पर आक्रमण कर सकते हैं जिनका विरोध वे अपने संगठन 'महाराष्ट्र अंधश्रद्धा निर्मूलन समिति' के बैनर तले कर रहे हैं। उनकी हत्या के तत्काल बाद उपजे जनाक्रोश से बचने और एक तरह से अपनी झेंप मिटाने के लिए महाराष्ट्र की तात्कालीन कांग्रेस-राष्ट्रवादी सरकार ने 18 साल से लंबित उस विधेयक पर अध्यादेश जारी करने का निर्णय लिया जिसे पारित करने के लिए दाभोलकर लंबे समय से सक्रिय थे। इस बिल का मकसद जादू-टोना करने वाले या काला जादू करने वाले लोगों को रोक लगाना था। महाराष्ट्र प्रीवेंशन एंड इरेडिकेशन ऑफ हयूमन सैक्रिफाइस एंड अदर इनहयूमन इविल प्रैक्टिसेस एंड ब्लैक मैजिक नाम के इस बिल का हिंदू उग्रवादी संगठनों ने लगातार विरोध किया था।

'काला जादू कानून' नाम से चर्चित इस कानून के निर्देशानुसार ऐसे कई पांखडी बाबाओं को जेल की सलाखों के पीछे भेजा जा चुका है जो चमत्कार दिखाकर लोगों को गुमराह कर रहे थे। खुद महाराष्ट्र अंधश्रद्धा निर्मूलन समिति के पास मौजूद रिकॉर्ड बताते हैं कि इनकी संख्या डेढ़ सौ से अधिक है। यह कानून दाभोलकर की शहादत के बाद ही बना था जिसके लिए उन्होंने सालों संघर्ष किया था। यह संस्था महाराष्ट्र, कर्नाटक और गोवा में अपनी तीन सौ शाखाओं के माध्यम से ऐसे तमाम मामलों में सक्रिय है।

एक तरफ आस्था का दोहन करने वाले तमाम बाबाओं, साध्वियों और पीर-फ़कीरों की संख्या आज बढ़ती जा रही है। दूसरी ओर देश में आज ऐसी समानांतर प्रक्रिया चल रही है जो भारत की संविधान की धारा 51 ए में मानवीयता और वैज्ञानिक चिंतन को बढ़ावा देने में सरकार के प्रतिबद्ध रहने की बात करती है। देश में आधुनिकता और वैज्ञानिक चिंतन को बढ़ावा देने के लिए यह संस्था कुछ अनूठे आयोजन भी करती है। 'इंडियन एक्सप्रेस' में 14 नवंबर 2015 को प्रकाशित एक खबर गौरतलब है। खबर

का शीर्षक था 'श्मशान में कवि सम्मेलन और वह भी अमावस्या की पूरी रात।' खबर के अनुसार अमावस्या की पवित्र रात में श्मशान में कवि सम्मेलन शीर्षक से आयोजित इस कार्यक्रम की मुख्य आयोजक भी नरेंद्र दाभोलकर की महाराष्ट्र अंधश्रद्धा निर्मूलन समिति थी। जिस समय पूरे शहर में दीपावली का आयोजन हो रहा था, उसी समय पुणे के उपनगर ओपोडी की श्मशान भूमि का परिसर एक अलग तरह के कार्यक्रम का गवाह बना था। वहां सैकड़ों की तादाद में एकत्रित लोगों के बीच कविताएं पढ़ी जा रही थी। एक कविता संग्रह का विमोचन भी हो रहा था। कुछ सांस्कृतिक समूह भी बीच बीच में अपनी प्रस्तुतियां दे रहे थे। इस आयोजन में 'सिद्धार्थ संघ' और 'सिद्धार्थ महिला संघ समिति' के सदस्यों द्वारा गाया एक गीत काफी चर्चित हुआ। इसके बोल थे **: बो रहे है हम प्रकाश बीज**

भूत-प्रेतों के अस्तित्व या उनके विचरण को लेकर समाज में व्याप्त गलत धारणाओं को चुनौती देने के लिए अंधश्रद्धा निर्मूलन समिति ने इसी तरह का एक कार्यक्रम कर्नाटक के बेलागामी सिटी कॉर्पोरेशन के बैकुठ धाम श्मशान में भी किया था। कर्नाटक के एक्साइज मंत्री सतीश जरकीहोली ने सैकड़ों लोगों के साथ वहीं रात बिताई और भोजन भी किया था। महाराष्ट्र की तर्ज पर कर्नाटक विधानसभा में अंधश्रद्धा विरोधी बिल लाने में अत्यधिक सक्रिय रहे थे। ये मंत्री दरअसल लोगों के मन में व्याप्त इस मिथक को दूर करना चाहते थे कि ऐसे स्थानों पर भूत निवास करते हैं।

अपनी किताब ''डिसएनचेन्टिंग इंडिया: ऑर्गनाइजड नेशनलिज्म इन इंडिया'', ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेम, 2012 में लेखक जोहान्स क्वैक ने भारत के तर्कवादी आंदोलन पर प्रकाश डालते हुए यह विशेष रूप से उल्लेख किया है कि महाराष्ट्र अंधश्रद्धा निर्मूलन समिति देश का सबसे सक्रिय तर्कशील संगठन है। इस किताब में अतीत के अनुभवों से लेकर आज की सक्रियताओं पर समिति के कामों का मूल्यांकन किया गया है। किताब भारत के तर्कशील आंदोलन के इतिहास और उसके नायकों पर भी रोशनी डालती है। इसमें ज्योतिबा फुले, गोपाल आगरकर, शाहू महाराज, रामास्वामी नामकर, जवाहरलाल नेहरू, भीमराव अंबेडकर, एम एन राय, गोपाराजू राव 'गोरा', अण्णादुराई और कई अन्य शामिल है।

अभी कुछ समय पहले ही नरेन्द्र दाभोलकर के बेटे हामिद दाभोलकर ने एक वेबसाइट को दिए गए अपने साक्षात्कार में बताया था कि दाभोलकर की शहादत के बाद कई सारे कार्यकर्ताओं ने अंधश्रद्धा निर्मूलन समिति के कामों के लिए अपने को पूरी तरह से समर्पित कर दिया और उस मशाल को मजबूती से आगे बढ़ाया जिसे उन्होंने प्रज्जवलित किया था। यह इस बात का प्रमाण है कि उनकी मौत उनके विचारों को खत्म नहीं कर सकती। हामिद का यह कहना था कि हमारा उद्देश्य था उस मकसद को आगे बढ़ाना जिसके लिए उन्होंने खुद को कुर्बान किया था। इसमें अगर हम असफल होते हैं तो इसका मतलब होता है हत्यारों की जीत। जब भी किसी नेता की मौत होती है, तो अनुयायी आवेग में आकर हिंसक हो जाते हैं। हम लोगों ने उससे खुद को दूर रखा। मेरा मानना है कि यह उनके विचारों की जीत है जो उन्होंने हमारे सामने रखे थे।

श्रद्धा और अंधविश्वास

सवाल है कि दाभोलकर के वे कौन से विचार थे जिसने तमाम लोगों को इस कदर प्रेरित किया कि उनकी शहादत के इतने वर्ष बीत जाने के बाद भी उनके विचारों की मशाल आगे बढ़ाने वाले लोगों की तादाद कम होने के बजाय बढ़ती जा रही है। इन विषयों पर उनकी लिखी कम से कम पांच किताबें इस गुत्थी को सुलझाने में हमारी मदद करती हैं।

उनकी पांचवी किताब 'विश्वास और अंधविश्वास' और एक अन्य किताब 'विवेक की प्रतिबद्धता' है। इनका हिंदी अनुवाद किया है प्रकाश अभिमन्यु कांबले और जयसिंग कांबले ने और प्रकाशक है राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली। इन दोनों किताबों की विशेषता यह है कि इसमें उनके अंधश्रद्धा संबंधी सभी विचारों को एक जगह समेट लिया गया है। मूलत: इन दोनों किताबों में उनके द्वारा समय समय पर दिए गए भाषणों और विभिन्न पत्र पत्रिकाओं में छपे लेखों का संकलन है।

विश्वास और अंधविश्वास की भूमिका में वे लिखते हैं:

विश्वास और अंधविश्वास का पर्याप्त विवेचन है विश्वास और अंधविश्वास का निर्णय करने के लिए सहयोगी होने वाला वैज्ञानिक दृष्टिकोण, विश्वास (श्रद्धा) की दृष्टि से व्यापक वैचारिक भूमिका से जोड़े गए नसीब, ईश्वर, नीति आदि विषयों की चर्चा है और विश्वास-अंधविश्वास

यह सवाल जिनके बारे में सबसे अधिक संवेदनशील होता है, उनका यानी महिलाओं का और अंधविश्वास उन्मूलन, उसका स्वरूप, उसके कारण, उपाय आदि बातों का विवेचन है। विश्वास -अंधविश्वास को हमेशा जिससे जोड़ा जाता है, उस फलज्योतिष का भंडाफोड़ यहां किया है। इसके साथ ही अभुआना, प्रेतबाधा होना (भूत लगना), भूतावेश (संचारना), प्रत्यक्ष दर्शन (साक्षात्कार होना) आदि बातों की वास्तविकता और मन, उसकी बीमारियां (विकार) आदि बातों की मनोवैज्ञानिक जानकारी यहां है। ये सभी विषय विश्वास-अंधविश्वास के दायरे से संबंधित होने के कारण इस पुस्तक को यह नाम दिया गया है (पेज 9)

किताब का पहला अध्याय 'श्रद्धा और अंधविश्वास' है। वे लिखते हैं कि अंधविश्वास उन्मूलन का पूरा आंदोलन श्रद्धा और अंधविश्वास के इर्द गिर्द ही घूमता है। वास्तव में अंधविश्वास उन्मूलन का अर्थ श्रद्धा का उन्मूलन नहीं है :

कुछ लोगों को लगता है कि जो काम हम कर रहे हैं वह बहुत ही अच्छा, उचित है और कुछ लोगों को यह गलत, बुरा, अनुचित लगता है। कुछ लोगों की दृष्टि से अगर यह काम नहीं होगा, तो हमारा देश सही मायने में इक्कीसवीं सदी में प्रवेश नहीं कर पाएगा और कुछ लोगों को ऐसा लगता है कि अंधविश्वास के नाम पर हम ईश्वर, धर्म, परंपराओं को डुबो रहे हैं। वे अंधविश्वास यानी क्या? ऐसा सवाल करते हैं, अंधविश्वास श्रद्धा के अंगारे पर जमा होने वाली राख है। राख को अगर बिखेर दिया जाए तो उसमें छिपा अंगारा पहले जैसे प्रज्ज्वलित होता है। उसी तरह अंधविश्वास की राख को उड़ा देने की जरूरत है। लेकिन ऐसा करते समय सावधानी बरतनी जरूरी है कि कहीं अंगारा ही बुझ न जाए (पेज 13)

वे एक जगह लिखते हैं कि श्रद्धा और अंधश्रद्धा में बहुत अंतर है। अगर किसी वस्तु पर श्रद्धा इतनी अधिक बढ़ जाती है कि वह अपने तर्क, बुद्धि और विवेक का सहारा लेना बंद कर देता है, तो वहीं श्रद्धा अंधश्रद्धा यानी अंधविश्वास में बदल जाती है :

अरस्तू पर श्रद्धा होने के कारण गैलीलियों के सहयोगियों ने दूरदर्शक यंत्र द्वारा देखने से इंकार कर दिया। उन्होंने कहा कि तुम्हें जो बृहस्पति के तीन उपग्रह दिखाई दे रहे हैं, वे उपग्रह नहीं बल्कि तुम्हारे दूरदर्शक यंत्र के कांच पर लगे तीन धब्बे हैं। फिर गैलीलियों ने कहा, 'कांच को साफ कर लेते हैं।' तब उसके सहयोगी कहने लगे, 'कांच साफ करने पर भी अगर तुम्हें उपग्रह दिखाई देंगे तो जरूरी तुम्हारी आंखों में कुछ गड़बड़ी होने के संकेत हैं।' इस पर गैलीलियों ने कहा, 'फिर आप अपनी आंखों से देख लीजिए।' तब उन्होंने कहा कि 'हमें देखने की जरूरत ही नहीं है। हमें हमारे ज्ञान पर और अपने गुरू के शब्द पर श्रद्धा है। अगर तुम्हारी आंखें खराब नहीं हैं, तो शायद दिमाग खराब हुआ होगा।' आखिरकार गैलीलियो के साथियों ने दूरदर्शक यंत्र से देखा ही नहीं क्योंकि उन्होंने अरस्तू के शब्द को प्रमाण मान लिया था। यह है शब्द प्रमाण (पेज 18)

यह लंबा उद्धरण मैंने इसलिए दिया है कि इस श्रद्धा और अंधश्रद्धा के बीच एक बारीक सा अंतर है। मनुष्य कब इस सीमा को पार कर जाता है उसे पता ही नहीं चलता।

अंधश्रद्धा अक्सर अत्यधिक अंधविश्वास का भी कारण बन जाती है। हमारे समाज में कई ऐसे अंधविश्वास हैं जो मानवी न होकर पारपिक है। इसके बारे में समाज में घृणा, नाराजगी और संताप होता है। देवदासी प्रथा के बारे में हम जानते ही हैं। इस प्रथा में बालों में गुत्थी हो जाने या मां-बाप की मनौती के कारण एक युवती का विवाह देवता से किया जाता है। यह भी एक वेश्यावृत्ति का स्वरूप है। कुछ हद तक आज भी प्रचलित इधर आंदोलन के चलते जनमानस में आक्रोश जागृत हुआ है। वास्तव में इन सब अंधविश्वासों को दूर करने के लिए जनमानस का समर्थन बहुत जरूरी होता है।

वैज्ञानिक नजरिया

दूसरा लेख वैज्ञानिक दृष्टिकोण पर है, वे लिखते हैं:

लोग हमेशा पूछते हैं कि अंधविश्वास उन्मूलन का काम स्वतंत्र रूप से करने की जरूरत ही क्या है? जैसे जैसे शिक्षा, विज्ञान और आधुनिकता का प्रसार होगा, वैसे वैसे वह अपने आप ही कम हो जाएगा। लेकिन ऐसा नहीं है। आज भी महाराष्ट्र के गांव के मेलों में मन्नत पूरी करने वालों में ज्यादातर पढ़े-लिखे लोग ही होते हैं। ऐसा करते वक्त उन्होंने जो शिक्षा हासिल की है, उसमें विसंगति नहीं लगती। आप जानते होंगे कि अभुआना (देवी का संचार) एक मानसिक अवस्था और मनोवृत्ति है। लेकिन आज भी महाराष्ट्र में कई जगहों पर नवरात्रोत्सव, अमावस और पूर्णिमा के दौरान गांवो के मेलों में देवी या देवता के किसी न किसी पर

सवार होने पर वे सब कुछ भूलकर नाचने लगते हैं और लोग उस व्यक्ति में देवी का संचार हुआ है ऐसा समझकर हाथ जोड़ते हैं। इसका मतलब ही यह है कि हमने विज्ञान की सृष्टि तो ली, पर उसकी दृष्टि नहीं ली' (पेज 31-32)

वास्तव में पढ़े-लिखे लोगों में भी वैज्ञानिक दृष्टिकोण का अभाव है। यही कारण है कि लोगों में इस दृष्टिकोण को पैदा करने की जरूरत है। इसी किताब में उनका एक और महत्वपूर्ण लेख 'फलित ज्योतिष का पाखंड' है। आज ज्योतिष और कुडंली के नाम पर सारे देश में भयानक पाखंड फैला हुआ है। इस विषय पर उन्होने विस्तार से इसमें लिखा है। प्राचीन काल से ही लोग अपना भविष्य जानने के लिए उत्सुक रहते आए हैं। उनकी इसी उत्सुकता ने इसे एक बड़े धंधे में बदल दिया है। इस अंधविश्वास के कारण बहुत सी लड़कियों का विवाह नहीं हो पाता क्योंकि उनकी कुंडली में दोष है वे लिखते हैं, 'हजारों प्रकाश वर्ष दूर तारे माँ के गर्भ में पल रहे शिशु पर कैसे प्रभाव डाल सकते हैं। इसका ग्रह दशा को ठीक करने के नाम पर पंडित, पुजारी और ज्योतिषी बहुत अधिक लूट-खसोट करते हैं।' इसी किताब के एक अन्य लेख में लेना की बीमारियां, भूतबाधा और देवी के संचार जैसे अंधविश्वासों पर भी दृष्टि डालते हैं। महिलाओं पर हिस्टीरिया में दौरे की पढ़े-लिखे लोग भी भूतबाधा और देवी का आना मान लेते हैं। देश के अनेक भागों में चुड़ैल समझकर औरतों की हत्या कर दी जाती है। इन रोगों का इलाज संभव है। वे कहते हैं कि इसके लिए वैज्ञानिक चेतना विकसित करने की जरूरत हैं।

आंदोलन की चतुर्सूत्री

इनकी दूसरी किताब 'विवेक की प्रतिबद्धता' में करीब पैंतीस निबंध संकलित हैं, ये सभी निंबध अंधश्रद्धा और उसके निवारण के लिए की गई बहसों, निष्कर्षों और उनके संघर्षों की गाथा है। ये निबंध अंधविश्वास उन्मूलन के संदर्भ में कई जगह कई बार हुई घटनाओं या सामने आई समस्याओं के संबंध में लिखे गए थे। स्वाभाविक रूप से इसमें प्रासंगिकता है। लेकिन पूरी किताब को देखें तो पता चलेगा कि ये एक सूत्र में बांधी गई हैं। लेखन की यह शैली पूर्वनियोजित नहीं है, यह आंदोलन के विचार और अनुभव के कारण हुआ है। इसलिए स्वाभाविक रूप से ये लेख आंदोलन की चतुर्सूत्री में अपने आप पिरोए गए हैं। अंधविश्वास उन्मूलन क्यों? इसकी भी एक चतुर्सूत्री है :

1. शोषण करने वाले, गुमराह करने वाले अंधविश्वासों का विरोध करना।

2. वैज्ञानिक दृष्टिकोण का प्रचार करना और उस आधार पर घटनाओं को जांचना।

3. धर्म की विधायक कृतिशील छानबीन करना यानी धर्मसंबंधी कुछ आकलन और धर्मनिरपेक्षता के अलग दृष्टिकोण विकसित करना।

4. व्यापक परिवर्तन का अहसास जागृत करना, उसे सजग करना।

इस किताब में ढेरों लेख ऐसे हैं जो पढ़े-लिखे लोगों को भी बहुत गहराई से प्रभावित करते हैं। मसलन, अंधविश्वास और चमत्कार पर आधारित लेख। बालू मामा की मन्नत वाली भेड़े और बकरे से दूध निकालने की चुनौती जैसे अनेक लेख इसमें संकलित हैं।

एक महत्वपूर्ण पत्र भी है जो महाराष्ट्र के गृहमंत्री आर आर पाटिल को लिखा गया था। इसमें एक असलम बाबा के चमत्कारों की बात की गई है जो हर तरह के इलाज और ऑपरेशन करने का दावा करता था। असलम बाबा खुद कहता है कि 'मैने पांच वर्ष में कुरान, छठे में वेद, सातवें में बाइबिल और नौवें वर्ष में पूरा इतिहास पढ़ा। मैं हार्ट, स्टमक, स्टोन के लिए ऑपरेशन, ब्लडकैंसर और गंजापन का भी इलाज करता हूं। मुझे ऑपरेशन के लिए मरीजों को बेहोश करने की जरूरत नहीं होती। पानी से हाथ गीले कर उंगलियां पेट और छाती में डालकर ऑपरेशन करता हूं। हृदय के वाल्व में बिगाड़ आए तो सीने में उंगली डालकर वाल्व निकालता हं और ठीक कर उसी जगह रख देता हूं। टांका डाले बगैर पंद्रह मिनट में जख्म ठीक होते हैं। ऑपरेशन के बाद चिंता करने की कोई जरूरत नहीं है और औषधि भी नहीं लगती। यह ऑपरेशन भी अल्लाह की देन है। हजारों रोगी आते हैं। इसलिए कोई जानकारी नहीं रखी जाती।'

पहले कसाई का धंधा करने वाला असलम बाबा जानवरों की आंतों के टुकड़े ऑपरेशन से निकालने कहकर मरीजों की हथेली पर रखता था। धंधा बढ़ाने के लिए खुद के ऑपरेशन की सीडी बनाने वाला यह पहला हाईटेक बाबा है। उसने इस धंधे में टैम्पो, ट्रैक्टर वगैरह से मरीजों को लेकर आने वाले वाहनचालकों को अपना एजेंट बनाया था। इस धंधे में उसने करीब दो सौ एकड़ जमीन खरीद ली थी (पेज 29-30)। वास्तव में बाबाओं के पास जाते हैं

और इनको मिल रहे भारी जनमसर्थन के कारण राजनेता भी इनके खिलाफ कार्यवाही करने से डरते हैं।

अपने दो आलेख 'प्रगतिशील परंपरा की हार' और 'पहला कदम आगे ही होगा' में उन्होंने महाराष्ट्र विधानसभा में करीब चौदह साल से लंबित अंधश्रद्धा उन्मूलन कानून को पास कराने में हो रही अत्यधिक कठिनाईयों की ओर हमारा ध्यान खींचा है। अखबार, न्यूज चैनल, अनेक राजनीतिक दल और उन लोगों ने इसका पुरजोर विरोध शुरू किया जिनके हित इस काम से बाधित हो रहे थे। जुलाई 2004 से हिंदू जनजागृति समिति ने कानून का विरोध शुरू किया और एक पर्चा बड़ी संख्या में महाराष्ट्र में बांटा गया। इसमें सिर्फ और सिर्फ झूठ परोसा गया था। उसके कुछ अंश इस तरह से थे :

इस कानून के कारण हिंदू धर्म के धार्मिक उत्सव, व्रत-उपवास, कुंभ मेला, पंढरपुर यात्रा, मन्नत, सत्यनारायण की पूजा, श्राद्ध, भगवान का कौल, ज्योतिष पंचांग, वास्तुशास्त्र के उपयोग आदि को अंधविश्वास माना जाएगा। गीता, रामायण, दासबोध पुस्तकें छापना गुनाह माना जाएगा। संत-परंपरा, संप्रदाय, प्रवचन पर बंदी लाकर भक्तों के कारावास मे जाने की बारी आएगी। इसलिए हिंदुओं, धर्म के क्षरण के लिए तैयार रहो (पेज 33)

वैसे तो तत्कालीन महाराष्ट्र सरकार ने इस झूठे प्रतिवाद का विरोध किया। लेकिन भाजपा और कांग्रेस के विधायकों के तीखे विरोध के कारण उस विधेयक को पास करना असंभव हो गया था और नरेंद्र दाभोलकर की हत्या के बाद ही यह बिल पास हो सका। अपने एक और महत्वपूर्ण लेख 'मानसिक गुलामी के गढ़' में वे बताते हैं कि बाबा, स्वामी, महाराज, कथित संतों और महंतों का वर्चस्व केवल महाराष्ट्र में ही नहीं, बल्कि पूरे भारतवर्ष में है।

कल्याणकारी राज्य व्यवस्था की असफलता

वे बताते हैं कि काले धंधे और धन और जनता की पिछड़ी हुई चेतना के लिए राजनेता जिम्मेदार हैं। उन्होंने सत साई बाबा और आशाराम जैसे ढोंगी बाबाओं का पदार्फाश भी किया था। इस संकलन में ढेरों लेख प्रचारात्मक भी हैं जिसमें वे बताते हैं कि कल्याणकारी राज्य व्यव्स्था की असफलता के कारण ढेरों गरीब लोग अपनी बीमारियों या विपन्न आर्थिक स्थिति को दूर करने के लिए इन साधु-महात्माओं के चुंगल में फंस जाते हैं और वे उनका हर तरह से दोहन और शोषण करते है। गणेश उत्सव महाराष्ट्र का प्रमुख पर्व है। लेकिन इसमें हजारों टन मिट्टी और प्लास्टर ऑफ पेरिस की मूर्तियों का विसर्जन समुद्र और नदियों में किया जाता है। उसमें लगे जहरीले पेंट और रसायन से पानी दूषित होता है। इसलिए उन्होंने पर्यावरण अनुकूल गणेश पूजा की मुहिम चलाई थी।

अपने एक अन्य लेख में वे लिखते हैं कि अनेक सामाजिक कारणों से स्त्रियां सबसे ज्यादा अंधविश्वास का शिकार होती है। वे आसानी से ढोंगी साधु-महात्माओं के चंगुल में फंस जाती है। इसलिए अंधश्रद्धा के खिलाफ हमारी लड़ाई में स्त्रियों के बीच चेतना जागृत करने की बहुत जरूरत है। वे कहते हैं कि इसके साथ ही साथ परिवार के बीच भी वैज्ञानिक दृष्टिकोण जगाने की जरूरत है।

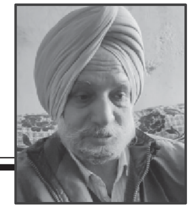
किताब के अंतिम लेख 'विवेकवादी आंदोलन : भविष्य की चुनौतियां' में उनके हिसाब से विविधता की हिफाजत करने वाले, न्याय-संगत समाज की रचना के लिए कटिबद्ध रहने वाले सार्वत्रिक सामूहिक विवेक की नवीन रूप में निर्मिति हो सकती है। इन संभावनाओं की परख होनी चाहिए और यही विवेकवादी आंदोलन के लिए आज की चुनौती है। अंधश्रद्धा निर्मूलन आंदोलन के अब तक के सफर में वह कृति के आधार पर विचारों के क्षेत्र में पहुंचने की बात करते हैं जो क्रमश: 'धर्मालोचन, धर्मनिरपेक्षता के मार्ग से होकर मानवाधिष्ठित विवेकवादी मुकाम पर स्थिर होता है।'

फिलहाल इस आंदोलन की पहचान शोषण करने वाले खुले अंधविश्वासों का विरोधी के रूप में है। लेकिन भविष्य में उसके सफर की व्यापक परिवर्तनवादी दृष्टि विवेकवाद तक पहुंच सकती है। इसका साफ अहसास समिति के सदस्यों का है।

किताब में कहीं-कहीं दोहराव दिखता है। इससे बचा जा सकता था। लेकिन नरेंद्र दाभोलकर के अंधविश्वास या अंधश्रद्धा विरोधी आंदोलन की वैचारिक, सैद्धांतिक और व्यवहारिक पृष्ठभूमि इन दोनों पुस्तकों से स्पष्ट रूप से आ गई है जिसकी रचना उन्होंने अंदोलन के दौरान उठाए जाने वाले प्रश्नों और आशंकाओं का जवाब देने के लिए की थी। ये बातें इन किताबों को बहुत महत्वपूर्ण और खास बनाती हैं।

(स्रोत : पत्रिका ''फिलहाल'', फरवरी 2023)

तीन मुँह वाले सांप की जकड़न से छुटकारा मिल गया



- बलवन्त सिंह लेक्चरार

दिनेश एक सरल स्वभाव का मालिक था। वे दो भाई थे, उस का दूसरा भाई कुछ वर्ष पहले ही यूरोप के एक देश में चला गया था। विदेश में रहते हुए उसकी जान-पहचान इंग्लैंड में रहने वाले एक परिवार से हो गई। उनकी साधारण जान-पहचान धीरे-धीरे उसके मृदु व्यवहार के चलते अत्यंत घनिष्टता वाले संबन्धों में बदलती चली गई। उसके कोमल स्वभाव से प्रभावित हो उस परिवार वालों ने अपने एक भारतीय एन.आर.आई. मित्र की लड़की से उसका रिश्ता तय करवा दिया और कुछ ही समय के पश्चात् उनकी शादी भी संपन्न हो गई। शादी के कुछ समय के पश्चात उस देश के नियम-कानून के तहत उसे वहां की नागरिकता भी मिल गई। अब वह भारत में रह रहे अपने परिवार को प्रर्याप्त तौर पर सहायता भी करने लग गया था।

इधर दिनेश भारत में अपने माता-पिता के साथ रह रहा था। यहां पर उनकी केवल तीन एकड़ जमीन थी, जिस पर उनका पिता स्वयं ही खेतीबाड़ी कर लिया करता था। विदेश वाले भाई की सहायता से उनकी बहन की शादी काफी धूम-धाम के साथ हो चुकी थी। दिनेश ने अपनी बी.ए. तक की पढ़ाई पूरी कर ली थी। अब दिनेश के मन में भी विदेश में जाने की इच्छा बलवती होती चली जा रही थी। अत: उसने इसके बारे में माता-पिता तथा अपने बड़े भाई से कहना शुरू कर दिया। रोज़-रोज़ के अनुरोध करने पर उसके मां-बाप ने उसकी शादी विदेश में करने के बजाय भारत में ही अपनी बिरादरी में करने की शर्त पर उसे भी बाहर जाने की अनुमति दे दी। फिर अपने बड़े भाई की मदद से कुछ समय के पश्चात वह भी इंग्लैंड में पहुँच गया।

अपने भाई की सहायता से वहां पर उसे किसी अच्छे स्टोर में काम मिल गया। वह वहां पर खूब मन लगा कर काम करने लगा। उसने वहां पर कई-कई शिफ्टों में काम करके खूब पैसा कमा लिया। इधर उसके मां-बाप का गुज़ारा उनकी खेतीबाड़ी से बहुत अच्छा चलता चला जा रहा था। दिनेश की कमाई का सारा पैसा उसके अपने बैंक अकाऊंट में जमा होता जा रहा था। फिर उसके विदेश जाने के सात-आठ साल के बाद उनके पिता जी की तबियत खराब रहनी शुरू हो गई। अब उनके मां-बाप ने दिनेश को भारत में वापिस आकर शादी करने का दबाव डालना शुरू कर दिया। उन्होंने दिनेश के लिए अपनी जाति-बिरादरी में एक लड़की भी पसन्द कर रखी थी। दिनेश की इच्छा तो वहां पर नागरिकता प्राप्त कर लेने के पश्चात् ही भारत में वापिस आने की थी, परन्तु अपने मां-बाप की इच्छा के आगे उसे झुकना ही पड़ा। अत: वह भारत में वापिस आ गया। वापिस आने के कुछ ही महीनों के पश्चात् दिनेश की शादी संपन्न हो गई। दिनेश की शादी के कुछ दिनों के पश्चात् उसका बड़ा भाई तो अपने परिवार समेत वापिस इंग्लैंड में चला गया। दिनेश अपने परिवार में भारत में ही रहने लग गया। कुछ समय के पश्चात् उनके पिता की तबियत और अधिक बिगड़ने लग गई। कुछ महीनों के पश्चात उनके पिता को दिल का दौरा पड़ा और अस्पताल में पहुँचने से पहले ही उस का निधन हो गया।

उसके कुछ महीनों के पश्चात् दिनेश के घर में एक पुत्र ने जन्म ले लिया। अपने घर में बेटे के आगमन से उसका मन उसके मोह में रम गया। अब उसके मन में दोबारा से विदेश जाने की भावना कम होती चली गई। अब उन दोनों पति-पत्नी ने विचार बनाया कि उसकी जमा की गई सारी धन राशि को यहां भारत में निवेश कर दिया जाए और अपनी पूरे आराम की जिन्दगी बसर की जाए। इसी दौरान उसने शहर के अर्बन-एस्टेट में एक कोठी किराये पर ले ली और वे अपना गांव छोड़ कर शहर में आ कर रहने लग गये। शहर में रहते हुए किसी अच्छे बिजनेस में अपना पैसा निवेश करने का उसका विचार था। जब इस बाबत उसने अपने जानकारों से बात चलाई तो किसी ने उसे एक नई कंपनी के बारे में बताया कि यह कंपनी किसी भी निवेश का बहुत अधिक रिटर्न देती है। दिनेश ने उस कंपनी में दो करोड़ रुपये लगा दिये तथा हर महीने ब्याज के रूप में काफी मोटा पैसा आना शुरू हो गया। अभी भी उसका विदेश से कमाया हुआ कुछ पैसा पड़ा था। उस दौरान शहर

में प्रापर्टी की कीमते तेजी से बढ़ती चली जा रही थी। उस ने शहर के अर्बन एस्टेट में एक प्लाट खरीद लिया। उसका विचार था कि शहर के उस प्लाट में अपनी एक शानदार कोठी बनवा कर उसमें अपने परिवार समेत सुख-मौज के साथ रहेगा।

दिनेश की मां शहर के मतलब-परस्त जीवन से जल्दी ही परेशान हो गई और उसने दिनेश पर अपने गाँव वाले घर में जा कर रहने के लिये दबाव डालना शुरू कर दिया। कुछ समय तक तो दिनेश गांव में जाकर रहने वाली अपनी मां की बात को टालता रहा, परन्तु जब उसकी मां ने अकेले ही गांव में जाकर रहने का फैसला कर लिया तो मजबूर हो कर दिनेश को परिवार समेत गांव में जाकर बसना पड़ा। उनके गांव में शहरों जैसी सभी सुख-सुविधाएं मौजूद थी। अत: वे सभी अपने गांव में प्रसन्नतापूर्वक रहने लग गये। शहर में अब प्रापर्टी की कीमतों में ठहराव सा आना शुरू हो गया। उसके एक परिचित प्रापर्टी डीलर ने उसे फोन कर के बताया कि 'उसके पास एक ग्राहक है जो उस प्लाट को खरीदना चाहता है। यदि वह उस प्लाट को बेचने के लिए सहमत हो तो उसे अभी उस प्लाट में पाँच लाख का मुनाफा मिल सकता है।' दिनेश ने अपनी मां तथा पत्नी के साथ इस के बारे में मशवरा किया। उसकी मां तो पहले से ही तैयार बैठी थी। पांच लाख मुनाफा मिलता देख उसकी पत्नी ने भी अपनी सहमति प्रदान कर दी।

इस प्रकार उसने पांच लाख के मुनाफे पर उस प्लाट का सौदा करके साथ ही आधी राशि लेकर प्लाट का ब्याना भी खरीददारों के नाम पर करवा दिया। उन्होंने दो महीने बाद ही प्लाट की रजिस्ट्री करवाने की तारीख तय कर दी। परन्तु दो महीने के बाद वे तहसील से रजिस्ट्री करवाने के लिये गये तो उन्हें पता चला कि किन्हीं प्रशासनिक कारणों से शहरी प्लाटों की रजिस्ट्रियां कुछ समय के लिये बन्द हो गई हैं। तब प्लाट के खरीददारों ने दिनेश से अनुरोध किया कि कुछ दिनों के बाद जब रजिस्ट्रियां खुल जाएंगी, तब वे शेष बचे हुए सारे पैसे देकर अपनी रजिस्ट्री करवा लेंगे, अभी वह उन्हें उस प्लाट में नींव को भर कर उसमें मिट्टी डालने की अनुमति प्रदान कर दे। उनके विनम्र अनुरोध को दिनेश टाल न सका और उसने उन्हें प्लाट की नीवों को भरने की इजाज़त दे दी।

इस के कुछ महीनों के पश्चात् अखबारों में यह खबर आ गई कि जिस कंपनी में दिनेश ने दो करोड़ रुपए का निवेश किया था वह कंपनी हजारों लेनदारों को करोड़ों रुपयों का चूना लगाकर चंपत हो गई है। इस बात की पुष्टि करने के लिए जब वह भागा-भागा उस कंपनी के दफ्तर में पहुँचा तो उसने पाया कि कंपनी के उस दफ्तर पर ताले लटक रहे हैं और उस जैसे सैंकड़ों लोक वहां पर खड़े अपनी पूंजी को गवां कर अपनी-अपनी किस्मत को कोस रहे हैं। उसके मन को गहरा धक्का लगा और वह निराश हो कर अपने घर वापिस लौट आया। जब उसने यह बात अपनी पत्नी एवं मां को बताई तो उनके मन पर भी गहरा आघात लगा।

अब इतनी बड़ी रकम डूब जाने से पूरा परिवार ही सदमें में आ गया। सदमें वाली मानसिकता के चलते उन सभी को कई प्रकार के मनोभ्रम पड़ना शुरू हो गये। मन पर पड़े इस बोझ के कारण एक दिन दिनेश की पत्नी को चक्कर आना शुरू हो गये तथा उसे डर भी लगने लग गया। अब उसे कई बार दौरा-सा भी पड़ जाता। जब बार-बार दौरा पड़ने लगा तो एक दिन दिनेश उसे एक प्रतिष्ठित अस्पताल में चैकअप के लिए ले गया। डाक्टरों ने उसके सभी प्रकार के टैस्ट लिए परन्तु उसके सभी टैस्ट सामान्य थे। डाक्टरो ने उसे हल्की सी दवाई देकर उनको वापिस घर भेज दिया। परन्तु एक-दो दिन के पश्चात् उसे फिर से दौरा-सा पड़ गया तो उसकी सास उसे साथ लेकर गांव में ही एक बाबा के पास झाड़ा करवाने के लिए ले गई। बाबा की चौंकी पर सुगंधित धूप-अगरबत्तियों एवं संगीत के प्रभाव में वहां पर मौजूद कई महिलाएं अपना सिर घुमा कर खेल रही थी। वे सास और बहू भी उस जगह पर काफी देर तक बैठी रहीं। वहां के वातावरण के प्रभाव में दिनेश की पत्नी ने भी सिर घुमा कर खेलना शुरू कर दिया। बाबा काफी देर तक उसके बाल पकड़ कर पूछता रहा कि बता वह कौन है? वह सिर घुमा कर खेलती रही परन्तु अपनी जुबान से वह कुछ भी नहीं बोली। अन्त में बाबा ने उस पर किसी के द्वारा किया गया जादू-टोना का वार बता दिया और थोड़ी सी भभूति सुबह-शाम खाने को तथा अपने माथे पर लगाने के लिये देकर उन्हें घर में वापिस भेज दिया।

अब एक तो सारा पैसा डूब जाने के ग़म वाला मन पर पड़ा हुआ बोझ और ऊपर से उस बाबा द्वारा उन के कोमल मनों पर बैठाया गया किसी जादू-टोने का मानसिक

डर उन सभी के अन्दर अत्यधिक सहम उत्पन्न कर गया। अब धीरे-धीरे उनका सारा परिवार ही मनोरोगी बनता चला गया। अब उन सभी की रातों की नींद हराम हो चुकी थी। परेशान होकर वे एक के बाद एक अनेक बाबाओं, पीर के भक्तों, बाला जी के भक्तों इत्यादि के पास जाकर अपना नाक रगड़ते रहे परन्तु उनकी मानसिक समस्याएं बढ़ती ही चली जा रही थीं। इसी परेशानी के कारण उनका अपने छोटे से बेटे की तरफ से ध्यान भटकना शुरू हो गया। बच्चे के पालन-पोषण की तरफ उचित ध्यान न होने के कारण वह भी चिढ़चिढ़े स्वभाव का बनता चला जा रहा था।

इसी दौरान एक दिन दिनेश किसी ज़रूरी कार्य के चलते शहर में आया और घूमते हुए अपने उस प्लाट की तरफ चला गया। वहां के हालात देखकर दिनेश के पैरों के तले से ज़मीन खिसक गई। उसने देखा कि उस प्लाट में मजदूर व मिस्त्री युद्ध सतर पर अपने कार्य में जुटे हुए हैं और उन्होंने मकान की दीवारें छत तक की खड़ी कर दी हैं। उसने तुरन्त प्लाट के खरीददार से फोन कर बात करनी चाही परन्तु उसने आगे से उसका फोन ही नहीं उठाया। उसने कई बार कोशिश की परन्तु बात करने में हर बार नाकामी ही हाथ लगी। फिर दिनेश ने अपनी गाड़ी उठाई और सीधा उस खरीददार के घर में पहुँच गया। वहां जाकर उसे पता चला कि वह खरीददार घर से कहीं बाहर गया हुआ है तथा दो दिन के बाद अपने घर में वापिस लौट कर आयेगा। दिनेश मानसिक तौर पर और अधिक परेशान हो उठा और परेशानी की हालत में अपने घर में वापिस आ गया।

अगले दिन सुबह ही वह तहसील में मकान के नाजायज निर्माण की शिकायत करने के लिए पहुँच गया। तहसील में जब वह अपना आवेदन-पत्र दाखिल करवाने के लिये गया तब उसे पता चला कि केवल अनाधिकृत कालोनियों के प्लाटों की रजिस्ट्रियां ही बन्द हुई हैं। प्लाट के उस खरीददार ने चालाकी के साथ अपने एक जानकार अष्टाम-विक्रेता की जुबान से उसे कहलवा दिया था कि सभी प्रकार की रजिस्ट्रियां अभी बन्द हैं। दिनेश ने उनकी बात पर भरोसा करके और अधिक पूछ-पड़ताल नहीं की थी और उनके नाम पर ब्याना लिख दिया था। ब्यानें में लिखी गई रजिस्ट्री की तारीख पर दिनेश तो उनकी बात पर यकीन कर के तहसील में गया ही नहीं था परन्तु खरीददार ने उस तारीख को तहसील में अपनी उपस्थिति दर्ज करवा ली थी।

दो दिनों के बाद जब दिनेश उस खरीददार को मिला तो वह टाल-मटोल करने लग गया। फिर बाद में भी अनेकों बार मिलने तथा पंचायत करने के पश्चात् भी उसने कोई रास्ता नहीं दिया। खरीददार द्वारा दिये गए उस प्रकार के धोखे के कारण दिनेश के मन पर और भी अधिक आघात पहुँचा। उसकी मनोस्थिति में लगातार बिगाड़ आता गया। उधर बाबाओं एवं तान्त्रिकों की रहस्यमयी बातों ने आग में घी डालने जैसा काम कर दिया। अब दिनेश अपने परिवार के अन्य सदस्यों से भी अधिक मनोरोगी बन चुका था। अब उसे नींद आनी भी लगभग बन्द ही चुकी थी, जब कभी नींद आ भी जाती तो उसे डरावने सपने आने लग जाते तथा वह हड़बड़ा कर उठ बैठता। इसी मनोस्थिति में उसे एक दिन सपना आया कि उसे एक तीन मुँह वाले सांप ने जकड़ रखा है। वह पूरी ताकत लगा कर उसी जकड़न से छुटकारा पाना चाहता है, परन्तु सांप की जकड़न और अधिक मजबूत होती चली जाती है। काफी जद्दोजहद के बाद उसकी आंख खुल जाती है और वह पसीने से पूरी तरह से तर-बतर हो जाता है। उसके पश्चात, उसकी मनोस्थिति और अधिक बिगड़ती चला जाती है। अब हर समय ही उसे अपने आस-पास तीन मुँह वाला सांप फुंफकारता हुआ महसूस होता है। अब तक वे बाबाओं की चौंकियों पर जा-जा कर अत्यधिक परेशान हो चुके थे।

अन्त में उनकी ऐसी दयनीय हालत को देख कर उनके एक परिचित ने उन्हें मेरा पता देकर रविवार को लगने वाले मनोरोग परामर्श केन्द्र में मेरे पास भेज दिया। मैंने उनकी सारी व्यथा-कथा को सुना और बारी-बारी से उन तीनों-दिनेश, उसकी पत्नी तथा उसकी माता का मनोविश्लेषण करते हुए मनोभ्रम को दूर किया तथा साथ ही उनके आत्मबल को मजबूत करने के सुझाव दिये। उसके बाद वे सभी अपने आप को मानसिक तौर अत्यन्त मजबूत महसूस करने लगे। फिर उनको लगातार चार-पाँच बार परामर्श केन्द्र में बुला कर मनोवैज्ञानिक काऊंसलिंग द्वारा उनके मनोबल को और अधिक मजबूत किया।

बाकी सब कुछ तो ठीक हो चुका था। उन सभी के सभी प्रकार के मनोभ्रम दूर हो चुके थे। दिनेश को अब पूरी तरह से तीन मुँह वाले सांप की जकड़न से छुटकारा

मिल चुका था। अब उन्हें डरावने सपने आना बन्द हो गये थे। परन्तु दिनेश के मन में इतना बड़ा आर्थिक नुकसान हो जाने की टीस अभी भी समय-समय पर उठ जाया करती थी। एक दिन फोन पर समय लेकर मुझ से मिलने के लिए विशेष तौर पर मेरे पास आया। उसने बातचीत में मुझ से सलाह मांगी कि यहां भारत में तो किसी तरह काम करने अथवा कोई विजनेस करने से उसका मन पूरी तरह से उचाट हो चुका है। उसने आगे बताया कि उसके पास इतना सा जुगाड़ तो है कि वह अब फिर से यूरोप के किसी भी देश चला जाए परन्तु उसकी पत्नी इसके लिए सहमत नहीं हो रही है। उसकी मां तथा पत्नी भी उसके साथ ही आई हुई थी। मेरे द्वारा मनोवैज्ञानिक ढंग से समझाए जाने पर उसकी पत्नी ने भी उसे विदेश में जा कर कमाई करने की सहमति प्रदान कर दी। उसके चार-पांच महीने के बाद वह यूरोप में चला गया। अब कभी-कभी वह मुझ को फोन करके अपनी प्रसन्नता व्यक्त करता रहता है।

नोट-यह एक सत्य घटना है, परिस्थितिवश पात्रों के नाम बदल दिये गये हैं।

पृष्ठ 30 का शेष का निधन हुआ तो उनके अंतिम दिनों में अपने ही तई कहे गए शब्द मुझे बार बार याद आते रहे, 'अनीश्वरवाद पर मेरा भरोसा और भी बढ़ता जा रहा है।'

जाने क्यो मैं बार बार सोचता हूँ कि भारतीय क्रांतिकारी संग्राम में धर्मनिरपेक्षीय चिंतन की अवधारणा को स्थापित करने के लिए 'गदर पार्टी' के योगदान को गहराई से रेखांकित करने की बड़ी जरूरत है। वहीं दूसरी ओर उसे नास्तिकता से जोड़कर आगे बढ़ाने के लिए मन्मथनाथ गुप्त, मणींद्र नाथ बनर्जी, क्रांतिकारी राधामोहन गोकुल और भगत सिंह के चिंतन और कोशिशों को एक सूत्र में पिरोकर देखने से हम उस विकास प्रक्रिया को भी समझ सकते हैं, जिसके बिना सचमुच के समाजवादी धर्मनिरपेक्षीय समाज की संरचना नहीं की जा सकती। वैसे नास्तिक चिंतन की परंपरा का सूत्रपात इतिहास में बहुत पहले हो गया था और इसके लक्षण दुनिया भर में समस्त धर्मों और दर्शनों के बीच खोजे-टटोले जा सकते हैं।

ईश्वर का नकार हमें मनुष्य होने और मनुष्यों से भरे पूरे समाज की रचना की ओर बार बार प्रेरित करता है। ईश्वर के बिना मनुष्य लंगड़ा नहीं बल्कि पूरा है। यानी खालिस मनुष्य, ईश्वर नाम का बिजूका सिर्फ आदमी को डराता है, भय का ही दूसरा नाम ईश्वर है जो बार बार हमारे सामने खड़ा किया जाकर मनुष्यता का मार्ग अवरूद्ध करता है, धर्म आदमी के पैरों में पड़ी हुई बेड़ियों के सिवा कुछ नहीं है। असली लड़ाई धर्म और ईश्वर के खिलाफ होनी चाहिए जिस ओर से हम बार बार अपनी पस्तहिम्मती के चलते मुंह मोड़ लेते रहे हैं।

नीत्शे ने कहा था कि ईश्वर मर चुका है, पर सचमुच में वह कभी था ही नहीं। **97608-75491**

कैंसर के मरीजों की मौत का सटीक समय

- प्रतीति पांडे

मौत का बिल्कुल सटीक समय पता चलेगा

डेली स्टार की रिपोर्ट के मुताबिक 53 साल के डॉक्टर सीमस कोइल अपने सालों के शोध के बाद एक ऐसा मॉडल विकसित करने में कामयाब हो चुके हैं, जिसके ज़रिये कैंसर पीड़ित मरीज़ की मौत का सही समय बताया जा सकेगा। अब वे उस टेस्ट को विकसित करने में जुटे हैं, जिसके ज़रिये परिवार वालों को ये पता चल सकेगा कि उन्हें अपने प्रियजन को आखिरी विदाई जीते जी कब देनी है। (The Clatterbridge Cancer Centre) में कंसल्टेंट के तौर पर काम करके डॉक्टर सीमस अपने प्रयासों के ज़रिये लोगों को कैंसर के लक्षणों को शुरुआत में ही समझने में मदद कर रहे हैं।

कम से कम आखिरी विदाई मिल सकेगी

इस सिस्टम के ज़रिये अगर मरीज़ों के परिजनों को उनकी मौत के सही वक्त का अंदाज़ा होगा तो वे आखिरी वक्त में उनके साथ रह सकेंगे। डॉक्टर सीमस कहते हैं कि लंबे वक्त से कैंसर पर रिसर्च हो रही है, लेकिन अब तक कोई भी ये सही-सही नहीं बता पाता था कि मरीज़ की मौत कब होगी. इसे लेकर डॉक्टरों का अपना अंदाज़ा होता था और आखिरी वक्त में कई बार परिजन मरीज़ के पास नहीं होते थे। (International Journal of Molecular Sciences) में छपी उनकी रिपोर्ट के मुताबिक मरीज़ के यूरिन से उनकी मौत का सही वक्त पता चल जाता है। ये जानने के बाद मरीज़ खुद तय करेंगे कि वे अपने घर में शांति से इस दुनिया से जाना चाहेंगे या फिर उन्हें अस्पताल में रहना है। **('न्यूज 18 हिन्दी' से साभार)**

मेरे साथ जो हुआ

– तस्लीमा नसरीन (चर्चित लेखिका)

मनुष्य पर भरोसा कर हर बार ही मैं ठगी गई हुं। लेकिन इस बारे मेरे साथ हुई ठगी तो मर्मातक है, क्योंकि मेरे शरीर, मेरे जीवन के साथ खिलवाड़ हुआ है। मेरे साथ हुए हादसे पर जिहादी सोशल मीडिया पर खुशी से नाच रहे हैं।

मेरी मां और दोनों भैया की साठ वर्ष के आसपास किसी न किसी वजह से मृत्यु हो गई थी। उनकी मृत्यु पर दुखी होते हुए भी मेरे मन में कहीं न कहीं यह एहसास था कि मैं उनसे ज्यादा दिनों तक इस पृथ्वी पर रहूंगी। इस आत्मविश्वास की वजह यह रही कि अपने स्वास्थ्य के बारे में मैं हमेशा से ही सजग हूं। मैं नियमित स्वास्थ्य जांच कराती हूं। साइकिल चलाती हूं। तेज गति से टहलती हूं और ट्रेडमिल पर चलती हूं। पिछले एक साल के दौरान वजन घटाकर मैं एकदम फिट और रोगमुक्त हो गई हूं।

लेकिन लगभग एक महीने पहले, 13 जनवरी को घुटने में चोट लगने पर अस्पताल में मैं यह जानने के लिए गई थी कि मेरे घुटने के जोड़ में कुछ हुआ तो नहीं। अगले ही दिन दोपहर को मेरे कूल्हे के जोड़ और जांघ की हड्डी (फीमर) को काटकर अलग कर दिया गया। मैं कुछ समझ पाती, उससे पहले ही दुर्घटना घट चुकी थी। यह दुर्घटना देश की राजधानी के एक अत्याधुनिक निजी अस्पताल में घटी। उस अस्पताल की इमरजेंसी में जिस वरिष्ठ डॉक्टर से मैंने संपर्क किया था, वह कूल्हा और घुटना बदलने के विशेषज्ञ थे।

उस डॉक्टर से जब मैंने अपने घुटने के दर्द के बारे में बताया, तो उन्होंने किसी तरह की कोई जांच नहीं की। न मुझसे यह पूछा कि घुटने के अलावा शरीर में कहीं और भी दर्द है या नहीं। उन्होंने मुझसे पैर हिलाने-डुलाने के लिए नहीं कहा। उन्होंने मुझे सीधे खड़े होने या कुछ कदम चलने के लिए नहीं कहा।

उन्होंने मुझे एक्स-रे और फिर सीटी स्कैन करने के लिए भेजा। फिर उन्होंने कहा कि मेरा नैक फीमर फ्रैक्चर हुआ है और इसमें चिकित्सा के दो विकल्प है-जोड़ना यानी फिक्सेशन और बदलना यानी रिप्लेसमेंट। मैं स्वाभाविक ही जोड़ने के विकल्प पर राजी थी। डॉक्टर ने कहा कि चूंकि मेरा वजन कम है, ऐसे में जोड़ने का विकल्प ही बेहतर होगा।

पर अगले दिन उन्होंने आश्चर्यजनक रूप से मुझे कहा कि वह फिक्सेसन नहीं, बल्कि हिप रिप्लेसमेंट करेंगे, यानी कूल्हा बदलेंगे। मैंने कहा कि मैं दूसरे डॉक्टरों की राय लूंगी। उनका कहना था कि उन्होंने इस बारे में राय ली है और सबने कूल्हा बदलने की राय दी है। मैंने कहा कि मैं आज नहीं करवाऊंगी। इस पर थोड़ा नाराज होते हुए डॉक्टर ने कहा कि कल वह नहीं आएंगे, और परसों तक रोके रखने में नुकसान हो जाएगा। तब मैंने उसी अस्पताल से एक परिचित बंगाली डॉक्टर को फोन किया। पर हिप रिप्लेसमेंट की महिमा का बखान करते हुए उन्होंने मुझे डॉक्टर पर आंख मूंदकर भरोसा करने की सलाह दी। उनका यह भी कहना था कि हिप रिप्लेसमेंट इतना कारगर है कि अगले दिन मैं अस्पताल से पैदल चलकर घर जा सकूंगी। पूर्व परिचित डॉक्टर ने मुझे ऑपरेशन के लिए जल्दी करने के लिए कहा, क्योंकि ऑपरेशन थियेटर तैयार था।

कूल्हा बदले जाने के तीन दिन बाद मैं और अच्छी तरह समझ पाई कि यह विकल्प मेरे लिए तो कतई नहीं था। जो लोग जोड़ का भीषण दर्द झेलते हैं और किसी भी दवा से दर्द कम नहीं होता, जिनके जोड़ जम गए हों, जिनके जोड़ से कैंसर या टयूमर हुआ हो, रूमेटाइड अर्थराइटिस (संधिवात) या गठिया से ग्रस्त जो बुजुर्ग चलने-फिरने की क्षमता खो चुके हों, उन्हें कूल्हा बदलने का विकल्प दिया जाता है, ताकि जितने भी दिन की उनकी आयु बची हो, वे थोड़ा-बहुत चल-फिर सकें। ऑपरेशन के पांच दिन बाद एक्स-रे की एक प्लेट देखकर मैं चौंक गई। उसकी रिपोर्ट में लिखा था कि जोड़ में पुराना कोई फ्रैक्चर था, जिसे जोड़ दिया गया है। नया कोई फ्रैक्चर नहीं है। इस पर मैंने डॉक्टर को बुलाकर जब कहा कि रिपोर्ट में तो कोई नया फ्रैक्चर

बताया ही नहीं गया था। फिर आपने कैसे कूल्हा बदलने का फैसला कर लिया? इस पर वह अस्पताल के निदेशक को ले आए और सफाई देते हुए कहा कि उस रिपोर्ट में तकनीकी त्रुटि है। सीनियर रेडियोलॉजिस्ट की रिपोर्ट में तकनीकी त्रुटि का बहाना विश्वसनीय नहीं था। अगले दिन मैंने यह कहकर जबर्दस्ती डिस्चार्ज लिया कि इस अस्पताल पर मुझे भरोसा नहीं है। लेकिन घर लौटकर डिस्चाज रिपोर्ट देखकर मैं स्तब्ध रह गई। उसमें घुटना के दर्द की बात न लिखकर यह झूठ लिखा हुआ था कि कूल्हे के जोड़ में असहनीय दर्द की शिकायत के साथ में अस्पताल आई थी। उसमें यह भी लिखा हुआ था कि डॉक्टर ने मुझे इलाज का विकल्प दिया था, लेकिन मैं हिप रिप्लेसमैंट पर ही अड़ी हुई थी। जो डॉक्टर ऐसी झूठी कहानी गढ़ सकते हैं, उनके लिए इस डिजिटल युग में फर्जी एक्स-रे रिपोर्ट और सीटी स्कैन तैयार करने में भला क्या मुश्किल हो सकती है? मनुष्य पर भरोसा कर हर बार ही मैं ठगी गई हूं। लेकिन इस बार मेरे साथ हुई ठगी तो मर्मांतक है, क्योंकि मेरे शरीर, मेरे जीवन के साथ खिलवाड़ हुआ है। मान लें कि अगर सममुच फ्रैक्चर हुआ था, तो भी उनका इलाज सीधे कूल्हा बदलना तो नहीं था। यदि इलाज से कोई सुधार नहीं होता और अंत में कूल्हा बदलने का फैसला लिया जाता, तो मुझे कोई आपत्ति नहीं थी। यदि किसी भीषण सड़क दुर्घटना मैं कूल्हे की हड्डी चूर-चूर हो जाती, तो मैं समझती कि मेरा सही इलाज हो रहा है। लेकिन मामला ऐसा नहीं है।

मैंने सुना है कि कारपोरेट निजी अस्पतालों में ऑपरेशन के लक्ष्य निश्चित तक दिए जाते हैं। ऐसे अस्पतालों के मालिक सर्जन को बता देते हैं कि इतने ऑपरेशन का लक्ष्य पूरा होना चाहिए। मेरे बारे में शायद यह छवि भी बनी कि यह विदेशी हैं, अपने देश में लौटकर मर भी गई, तो कुछ नहीं होगा। जहां तक मेरा मानना है, ऑपरेशन करने वाला डॉक्टर निश्चित तौर पर यह नहीं जानते रहे होंगे कि मैं एक लेखिका हूं, और खुद डॉक्टर रह चुकी हूं। उन्होंने मुझे जनों से वंचित एक विदेशी मुस्लिम मरीज समझ लिया होगा।

पिछले तीस साल से जिहादी मेरी हत्या की कोशिश में नाकाम हुए हैं। लेकिन उस दिन कुछ ही घंटे में एक कॉरपोरेट अस्पताल ने जिहादियों की मंशा पूरी कर दी। सोशल मीडिया पर जिहादी अब खुशी से नाच रहे हैं। वे उस डॉक्टर और उस अस्पताल के प्रति गद्गद हैं, जिन्होंने उनकी वर्षों पुरानी इच्छा पूरी कर दी है। उन जिहादियों का कहना है कि मैं अब पंगु हो गई हूं। उनके मुताबिक, अल्लाह ने ही मुझे नास्तिक होने की सजा दी है। बेशक मैं नास्तिक हूं। परलोक के बजाय यह लोक ही मेरे लिए सब कुछ है। तथा इस जीवन की और अर्थपूर्ण बनाने के लिए मैं अब एक पैर पर खड़ी हूं।

दबंगों ने डायन का आरोप लगा कर महिला को पीटा, जख्मी

पी एच सी में चल रहा घायल महिला का इलाज

संवाददाता, छौड़ाही

ओ पी थाना क्षेत्र के नारायणपीपड़ पंचायत अंतर्गत बड़ी जाना गांव के वार्ड संख्या-पांच की रहने वाली एक महिला पर दबंगों ने डायन का आरोप लगा कर मारपीट करते हुए भद्दी-भद्दी गालियां दीं, पिटाई से महिला चोटिल हो गयी है। चोटिल महिला का इलाज प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र, छौड़ाही में किया गया।

जानकारी के अनुसार, पीड़ित महिला बड़ी जाना गांव निवासी राजेश शाह की पत्नी आशा देवी है। पीड़िता ने स्थानीय थाने में अपने ही पड़ोसी को आरोपित करते हुए लिखित शिकायत की है, पीड़िता ने स्थानीय थानें में दिये गये आवेदन में अपने ही पड़ोसी रंजीत साह, संतोष साह, लीला देवी, शांति देवी, पनमा देवी पर आरोप लगाते हुए बताया है कि सभी मिल कर गाली-गलौज करते हुए जबरन घर में घुस कर लाठी और मुक्का से पीट-पीट कर बेहोश कर दिया। पीड़िता ने लीला देवी पर आभूषण छीनने और शांति देवी पर सिर का बाल उखाड़ने का आरोप लगाया है।

स्रोत : ''प्रभात''

कहते हैं ओ पी अध्यक्ष

पीड़िता द्वारा आवेदन दिया गया है। गश्ती दल को भेजकर घटना की जांच करायी जायेगी। जांच पड़ताल के आधार पर विधिसम्मत कार्रवाई की जायेगी।

पवन कुमार सिंह, ओपीध्यक्ष, छौड़ाही

24 मई - महान वैज्ञानिक कॉपरनिकस को याद करने का दिन!

ब्लैक डैथ ऐसी महामारी थी जिसने यूरोप की आधी आबादी का सफाया कर दिया था। 14वीं शताब्दी के इस त्रासद दौर के बाद अगले तीन सौ बरस तक यूरोप ने अपना पुनर्निर्माण किया। ग्रीक और रोमन सभ्यताओं के ज्ञान को दोबारा से खोजा गया। कला और विज्ञान के प्रति लोगों में नई दिलचस्पी जागी और पढ़े-लिखे लोगों ने इस सिद्धान्त का प्रचार-प्रसार किया कि आदमी के विचारों की क्षमता असीम है और एक जीवन में वह जितना चाहे उतना ज्ञान बटोर कर सभ्यता को आगे बढ़ाने में महत्वपूर्ण योगदान कर सकता है। तीन सौ बरस का यह सुनहरा अन्तराल रेनेसां यानी पुनर्जागरण कहलाया।

रेनेसां के मॉडल के तौर पर अक्सर पोलैंड के निकोलस कॉपरनिकस का नाम लिया जाता है। गणितज्ञ और खगोलशास्त्री कॉपरनिकस चर्च के कानूनों के ज्ञाता, चिकित्सक, अनुवादक, चित्रकार, गवर्नर, कूटनीतिज्ञ और अर्थशास्त्री भी थे। उनके पास वकालत में डॉक्टरेट की डिग्री थी और वह पोलिश, जर्मन, लैटिन, ग्रीक और इटैलियन भाषाओं के विद्वान थे। 19 फरवरी 1473 को तांबे का व्यापार करने वाले परिवार में जन्मे कॉपरनिकस चार भाई-बहनों में सबसे छोटे थे। दस के थे जब माता-पिता दोनों का देहान्त हो गया। आगे की परवरिश मामा ने की।

मामा ने ही उन्हें क्राकाव यूनिवर्सिटी पढ़ने भेजा जहाँ उन्होंने गणित, ग्रीक और इस्लामी खगोलशास्त्र का अध्ययन किया। वहाँ से लौटने के बाद मामा ने आगे की पढ़ाई के लिए अपने काबिल भांजे को इटली भेजने का मन बनाया। यातायात के साधन दुर्लभ थे और दो महीनों की लम्बी पैदल यात्रा के बाद कॉपरनिकस किसी तरह इटली पहुँचे जहाँ अगले छः साल तक यूरोप के सबसे प्राचीन और सर्वश्रेष्ठ दो अलग-अलग विश्वविद्यालयों- बोलोना और पाडुआ-में उनकी पढ़ाई हुई। यहीं उन्होंने उन सारी चीजों पर सवाल करना शुरू किया जो उनके अध्यापक कक्षाओं में पढ़ाया करते रहे थे। ब्रह्माण्ड की संरचना के बारे में अरस्तू और टॉल्मी के सिद्धान्तों में उन्हें घनघोर विसंगतियां नजर आईं।

1503 में जब वे वापस घर लौटे उनकी उम्र तीस की हो चुकी थी। मामा प्रभावशाली आदमी थे और उनकी सिफारिश पर उन्हें स्थानीय चर्च में कैनन की नौकरी मिल गई। इस पेशे में उन्हें नक्शे बनाने के अलावा टैक्स इकठ्ठा करना और चर्च का बही-खातों को देखना होता था। आराम की नौकरी थी। 1510 में मामा की मौत हो गई।

कॉपरनिकस ने अपना अलग घर बनाया और अपने खगोलीय अध्ययन के वास्ते एक टावर बनवाई। उस समय तक टेलीस्कोप का अविष्कार नहीं हुआ था। लकड़ियों और धातु के पाइपों की मदद से वे नक्षत्रों की गति का अध्ययन किया करते। 1514 में उन्होंने एक वैज्ञानिक रपट लिख कर अपने दोस्तों को बांटी। भौतिक विज्ञान के इतिहास में इस रपट को अब 'द लिटल कमेंट्री' के नाम से जाना जाता जाता है। कॉपरनिकस ने दावा किया कि धरती सूरज के चारों ओर घूमती है, न कि सूरज धरती के, जैसा कि धर्मशास्त्रों में लिखा था। इस सिद्धान्त से अरस्तू और टॉल्मी के सिद्धान्तों की दिक्कतें दूर हो जाती थीं। इस शुरुआती काम के बाद अगले दो दशक गहन अध्ययन के थे।

1532 के आते-आते कॉपरनिकस अपने सिद्धांतों को एक पांडुलिपि का रूप दे चुके थे। इसका प्रकाशन उन्होंने जानबूझ कर रोके रखा क्योंकि उन्हें आशा थी वे कुछ और सामग्री जुटा सकेंगे। इसके अलावा उन्हें यह भय भी था कि पादरी लोग भगवान के नाम पर बड़ा बखेड़ा खड़ा करेंगे। कुछ सालों बाद जर्मनी से एक नामी गणितज्ञ जॉर्ज रेटीकस उनके साथ काम करने पोलैंड आए। कॉपरनिकस अड़सठ के हो चुके थे जब उनकी सहमति से संशोधित पांडुलिपि को लेकर जॉर्ज रेटीकस नूरेमबर्ग पहुंचे जहाँ योहान पेट्रीयस नाम के प्रिंटर ने उसे 'ऑन द रेवोल्यूशंस ऑफ द हेवनली स्फीयर्स' नामक क्रांतिकारी किताब की शक्ल दी।

किताब की शुरुआत में कॉपरनिकस एक रेखाचित्र के माध्यम से ब्रह्माण्ड के आकार के बारे में बताया।

इसमें सूर्य को केंद्र में रख उन्होंने उसके चारों तरफ अलग-अलग कक्षाओं में परिक्रमा करने वाले सभी ग्रहों को दिखाया गया था। जटिल गणनाओं के बाद उन्होंने यह भी बताया था कि इनमें से हर ग्रह को सूर्य का एक फेरा लगाने में कितना समय लगता है। आज के उन्नत खगोल विज्ञान और उसकी तकनीकों की मदद से जो ग्रहों की परिक्रमा का जो समय निकलता है, कॉपरनिकस की गणना आश्चर्यजनक रूप से उसके बहुत करीब है।

किताब छपकर नहीं आई थी और लम्बे समय से बीमार कॉपरनिकस कोमा में जा चुके थे। बताते हैं कि जब पहली प्रति उनके पास पहुंचाई गई वे बेहोशी से उठ बैठे और लम्बे समय तक आंखें मूंदे किताब को थामे रहे। कुछ दिनों बाद (24 मई 1543 के दिन) उनकी मौत हो गई। वे यह देखने को जीवित नहीं बचे कि कैसे उनकी महान क्रांतिकारी रचना ने पादरियों और धर्मगुरुओं के बनाए संसार को उसकी धुरी से रपटा दिया था।

जाहिर है कॉपरनिकस की किताब ने धर्म के कारोबारियों को बौखला दिया। चर्च का आधिकारिक बयान आया जिसमें किताब झूठा और पवित्र धर्मशास्त्र की मुख़ालफ़त करने वाला बताया गया।

कोई 60 साल बाद इटली के ब्रूनो को सिर्फ इसलिए ज़िंदा जलाए जाने की सजा दी गयी कि उसने कॉपरनिकस के सिद्धान्त का प्रचार-प्रसार किया। इसी अपराध के लिए गैलीलियो को भी ज़िंदा तो नहीं जलाया गया अलबत्ता उसके समूचे जीवन को अपमान और तिरस्कार से भर दिया गया।

आज जब आदमी मंगल पर घर बनाने की कल्पना कर रहा है हमने कॉपरनिकस को याद रखना चाहिए, समूचे अन्तरिक्षविज्ञान की बुनियाद में जिसकी चालीस-पचास सालों की साधना चिनी हुई है। कॉपरनिकस का जीवन बताता है सच्चाई की खोज कभी निष्फल नहीं जाती और उसकी रोशनी सदियों बाद तक आदमी के रास्ते को आलोकित करती रहती है।

1543 में आज ही के दिन कॉपरनिकस की देह की मृत्यु हुई। वह दुनिया भर की प्रयोगशालाओं में जीवित है।

साभार-अशोक पाण्डे जी की फ़ेसबुक वॉल से

(कोपरनिकस के समय में विज्ञान चर्च, धर्म और पोंगापन्थ के चंगुल में था जबकि आज यह मुनाफ़े के ऑक्टोपसी शिकंजे में भी जकड़ा हुआ है। आज के सच्चे वैज्ञानिकों, जागरूक छात्रों और कोपरनिकस के वारिसों के सामने यह एक बड़ी चुनौती है। मेहनतकश जनता के बूते और इसके साथ जुड़कर निश्चय ही हम मुनाफ़ाखोर व्यवस्था से पार पायेंगे और भविष्य हमारा होगा। - दिशा)

तर्कशील कविता

ओपरी हवा का हव्वा

ओपरी हवा का हव्वा जो फैला है समाज में,
वह बिज्जू है न भूत है दहशत का ही रूप है।
मानसिक रोगियों पर फंदे डाल देता है,
गली-सड़ी रूढ़ियों का भयानक उलूक है।
सदियों से चल रहे अन्धविश्वास हैं,
जड़-मान्यताओं के जंगली पलाश हैं।
जन्त्र-मंत्र, झाड़-फूंक नज़रों के टोने भी,
घुट्टी में पिलाए गये जन-विश्वास हैं।
दकियानुसी ख्याल, डायन-चुड़ैल-बेताल,
अवचेतन मन में जाकर छिप जम जाते हैं।
समाज-विरोधी तत्तव अफवाह फैलाते जब,
पुरातन संस्कार ही उत्पात मचाते हैं।
बना लेते हैं रूप कभी जिन्न का, प्रेत का,
सहमे हुए लोगों को शिकार बनाते हैं।
पित्तरों को पूजते, जो चढ़ावा चढ़ाते हैं,
आत्मा चक्कर में पड़कर भूतों से घबराते हैं।
ओझाओं-सयानों से झाड़ा लगवाते डोलें।
अधसिरे भ्रम के सलेड, उन्हीं को सताते है।
अपने दिल और दिमाग से ओपरी-पराई का।
भूतनी की छाया का, चामुंडा काली माई का।
ज्ञान का जलाकर दीप जड़ से मिटा दो नाम।
यही तो सच्चा जादू विज्ञान की पढ़ाई का ।
मानवता के हत्यारों से सावधान हो जाओ तुम।
तान्त्रिक ओझाओं की चाल में न आओ तुम।
सन्त कबीर गुरु रविदास सदियों पहले कह गये-
अन्धविश्वसों को सरेआम जलाओ तुम ।
अन्धविश्वसों की सरेआम जलाओ तुम ।

डॉ. विकास आनन्द

साम्प्रदायिक दंगे और भारतीय पुलिस

विभूति नारायण राय, पूर्व अधिकारी भारतीय पुलिस सेवा (IPS)

मुझे कई साम्प्रदायिक दंगों को एक पुलिस अधिकारी की हैसियत से नज़दीक से देखने का मौक़ा मिला है। मेरे लिये हमेशा पुलिसकर्मियों का व्यवहार सबसे तकलीफ़ का बायस रहा है। हर बार यही लगता रहा है कि पुलिसकर्मी एक ख़ास तरह के पूर्वाग्रह और अल्पसंख्यक-विरोधी मानसिकता के तहत काम करते हैं। देश के लगभग सभी बड़े दंगों का अध्ययन करने के बाद मेरा यह विश्वास दृढ़ हुआ है कि पुलिस-बलों में कार्मिकों की संख्या, हथियार, वाहन, संचार-उपकरण जैसे 'लोजिस्टिक्स' में वृद्धि करने से अधिक महत्वपूर्ण है उनकी सोच में परिवर्तन लाना। एक बड़ा और सुसज्जित पुलिस-बल इच्छा-शक्ति और धर्मनिरपेक्ष आचरण के बिना वैसा ही प्रदर्शन करेगा जैसा हमने 6 दिसंबर, 1992 को देखा। जब बीस हज़ार से अधिक पुलिस जनों के सामने बाबरी मस्जिद तोड़ दी गयी और वे बिना किसी प्रतिरोध के चुपचाप खड़े देखते रहे। अहमदाबाद (1969) में हुए दंगों की जाँच कर रहे जगमोहन रेड्डी आयोग ने आधे दर्जन से अधिक ऐसे मामले गिनाए हैं, जहाँ पुलिस थानों अथवा चौकियों से सटे हुए मुस्लिम धर्मस्थलों को नष्ट किया गया। आयोग के सामने रायखाड़ पुलिस लाइन्स के पास स्थित सय्यदवाड़ा के मुसलमानों तथा वहाँ स्थित मस्जिद पर पुलिसकर्मियों के हमले का मामला भी आया। भागलपुर (1989) में तो एक उदाहरण ऐसा भी है जहाँ पुलिसकर्मियों ने पुलिस लाइन्स से निकलकर उससे सटे एक मुस्लिम मोहल्ले पर हमला कर दिया और लूटपाट की। ये दोनों उदाहरण भी पुलिस के हिन्दू बने रहने के उदाहरण हैं। जब कभी सरकार या वरिष्ठ अधिकारियों की ओर से सख्ती बरतने का आदेश दिया जाता है तो बिना किसी विवाद के यह मान लिया जाता है कि इस सख्ती का मतलब मुसलमानों के साथ सख्ती है। सख्ती के विभिन्न स्वरूपों में गिरफ़्तारी का मतलब मुसलमानों की गिरफ़्तारी, तलाशी का मतलब मुसलमानों के घरों की तलाशी और पुलिस फ़ायरिंग का मतलब मुसलमानों पर फ़ायरिंग होता है। हमारे अवचेतन पर पूर्वाग्रह कितना गहरा असर डालते हैं और हमारा आचरण किस क़दर उनसे प्रभावित होता है, इसका एक बड़ा उदाहरण साम्प्रदायिक हिंसा के दौरान पुलिसकर्मियों के आचरण में मिलता है। उन दंगों में भी, जहाँ पहले क्षण से ही मुसलमानों की क्षति शुरू हो गयी थी और जिनमें हिन्दुओं के मुक़ाबले बहुत बड़ी संख्या में मुसलमान मारे गए, उनमें भी कार्यरत रह चुके पुलिसकर्मियों से बात करने पर बड़ी दिलचस्प मानसिकता सामने आयी। दंगे के दौरान तो वे मानते ही रहे कि सारी शरारत के पीछे मुसलमानों का हाथ है, दंगा समाप्त होने के काफी दिनों बाद भी, जब यह स्पष्ट हो गया कि दंगे में क्षति किसकी हुई, उनके पास यह सिद्ध करने के लिए अकाट्य सबूत थे कि दंगे की पूरी ज़िम्मेदारी मुसलमानों की थी। 1987 में मेरठ में भयानक दंगे हुए जो रुक-रुककर कई महीनों तक चलते रहे। इस दंगे से निपटने वाले पुलिसकर्मी किस तरह के पूर्वाग्रहों से ग्रस्त थे इसका उदाहरण हाशिमपुरा की घटना में मिलता है। दंगा शुरू होने के पाँच दिन बाद अर्थात् 22 मई को दिन में सेना, पी.ए.सी. और पुलिस ने हाशिमपुरा मोहल्ले में तलाशियाँ लीं। हाशिमपुरा मेरठ शहर के मध्य में बसा एक मुस्लिम बहुल इलाक़ा है, जिसमें काफी संख्या में करघों पर काम करने वाले बुनकर रहते हैं। इन बुनकरों में भी एक अच्छी संख्या रोज़गार की तलाश में आये बिहारी बुनकरों की है। तलाशी के दौरान मुसलामानों को उनके घरों से निकालकर बाहर बैठा लिया गया और फिर उनमें से छाँट-छाँट कर नौजवानों को एक किनारे इकठ्ठा किया गया। इन नौजवानों को पी.ए.सी. के ट्रक में हाशिमपुरा से सीधे गाज़ियाबाद की तरफ ले जाया गया। मेरठ-गाज़ियाबाद के लगभग मध्य में स्थित मुरादनगर क़स्बे की शुरुआत के पहले पड़ने वाली गंगनहर पर मुख्य सड़क से हटकर, नहर की पट्टी पर कुछ किलोमीटर अन्दर ले जाकर, पी.ए.सी. के जवानों ने ट्रक में चढ़े हुए लोगों को उतरने का हुक्म दिया। कुछ के नीचे उतरते ही उन्होंने अपनी थ्री

नॉट थ्री की राइफ़लों से भूनकर नहर में फेंकना शुरू कर दिया। सम्भवतः गोलियों की आवाज़ सुनकर गाँव वाले वहाँ इकट्ठे होने लगे थे या फिर बचे हुए लोगों ने आसन्नमृत्यु से डरकर ट्रक से उतरने से इन्कार कर दिया, इसलिए उन जीवित लोगों को लेकर यह ट्रक फिर गाज़ियाबाद की ओर भागा। गाज़ियाबाद जाने का एक कारण सम्भवतः यह था कि पी.ए.सी. की जिस टुकड़ी ने यह दुष्कृत्य किया था, वह इक्तालीसवीं बटालियन की थी और उसका मुख्यालय गाज़ियाबाद में था, इसलिए वहाँ पहुँचकर वे ज़्यादा सुरक्षित महसूस कर सकते थे। इक्तालीसवीं बटालियन का मुख्यालय गाज़ियाबाद-दिल्ली सीमा पर राष्ट्रीय राजमार्ग पर स्थित है। यह ट्रक इस मुख्यालय से लगभग आधा किलोमीटर पहले कच्चे मार्ग पर उतर गया और मुख्य सड़क से थोड़ी दूर स्थित एक नहर पर जाकर रुका। वहाँ शेष बचे लोगों को घसीटकर ट्रक से उतारा गया और उन्हें भी गोली मारकर नहर में फेंक दिया गया। इस कार्यवाही के बाद ट्रक फिर तेज़ी से कच्चा रास्ता पार करते हुए बटालियन कैम्पस के अन्दर भाग गया। वहाँ थोड़ी देर रुकने के बाद ट्रक और उसके सवार मेरठ चले गए, जहाँ उस समय वे ड्यूटी पर थे। मैं इस घटना के दौरान गाज़ियाबाद का पुलिस अधीक्षक था। मैंने थाना लिंक रोड और थाना मुरादनगर पर इस लोमहर्षक हत्याकाण्ड की रपटें दर्ज करने का हुक्म दिया। 23 मई 1987 को दर्ज की गयी इन रपटों के आधार पर आज तक किसी अपराधी को दण्डित नहीं किया जा सका है।

भिवंडी, जलगाँव (1970) के दंगों की जाँच कर रहे न्यायमूर्ति मदन कमीशन ने रिपोर्टिंग के दौरान प्रदर्शित साम्प्रदायिक मनोवृत्ति के कई उदाहरण गिनाए हैं। न्यायमूर्ति मदन की राय बड़ी स्पष्ट है-

पुलिस अधीक्षक का मस्तिष्क साम्प्रदायिकता से भरपूर था और संभवतः वह जनसंघ की तरफ आकृष्ट था। खुफ़िया विभाग ने भी इस दंगे को लेकर इसी मनोवृत्ति का परिचय दिया। पी.एस.आई. बड़गूजर ने डी.आई.जी. आई.एन. टी.टी. को भेजी गयी रिपोर्ट में यह एकदम ग़लत तथ्य अंकित किया कि दंगा मुसलमानों द्वारा हिन्दुओं के घरों पर जलती मशालें फ़ैकने से शुरू हुआ। दंगों से सम्बन्धित मुक़दमों की तफ़्तीश करने वाली एजेन्सियों के आचरण में भी साम्प्रदायिक पूर्वाग्रह की प्रवृत्ति साफ़ दिखाई देती है।

अध्ययन के मुख्य निष्कर्ष निम्नलिखित हैं-

(क) अधिकाँश दंगों में पुलिस का व्यवहार पक्षपातपूर्ण रहा है। इस अध्ययन में वर्णित सभी दंगों में पुलिस ने क़ानून और व्यवस्था लागू करने वाली तटस्थ संस्था से अधिक एक हिन्दू बल के रूप में कार्य किया।

(ख) बल-प्रयोग, निरोधात्मक गिरफ़्तारियों, कर्फ़्यू लागू करने, पुलिस थानों में व्यक्तियों के साथ व्यवहार, तथ्यों की रिपोर्टिंग तथा दंगे के दौरान दर्ज मुक़दमों की तफ़्तीश और पैरवी में पुलिस के आचरण में स्पष्ट भेदभाव दिखाई देता है। इन सारे प्रसंगों में मुसलमान ही ज़्यादती के शिकार होते हैं।

यह भी एक तथ्य है कि 1960 के बाद उत्तर प्रदेश में एक भी दंगा नहीं हुआ, जिसमें सामाजिक कार्यकर्ताओं और मानवाधिकार संगठनों ने पी.ए.सी. की भूमिका को पक्षपातपूर्ण और विशेष रूप से मुस्लिम विरोधी न पाया हो।

इसके बाद साल-दर-साल लगभग सभी दंगों में पी.ए.सी. ने अपना मुस्लिम विरोधी प्रदर्शन जारी रखा।

भिवंडी के दंगों (1970)के दौरान तलाशियों, गिरफ़्तारियों और तफ़्तीशों के सिलसिले में भेद-भाव इतना मुखर था कि इन दंगों की जाँच करने वाले न्यायिक आयोग ने मजबूरन पुलिस के विरुद्ध बहुत गम्भीर आक्षेप लगाए।

विभूति नारायण राय (IPS), 'साम्प्रदायिक दंगे और भारतीय पुलिस', पृष्ठ 94, 98,100, 101,105, 115, 117; राधा कृष्ण प्रकाशन, नयी दिल्ली

तानाशाह

हर सूरत में
खतरनाक होते हैं
मगर सबसे खतरनाक होते हैं
वालिद की हैसियत
टीचर की हैसियत
दोस्त रकी सूरत
जो जन्म देते रहते हैं
अंतहीन तानाशाहों को!

- शहज़ाद खान

पुर्तगाल कैथोलिक चर्च में अब बाल यौन शोषण के मामले आए सामने

-विजय कुमार

कया 'संत-महात्मा' देश व समाज का मार्गदर्शन करते हैं? इसी सिलसिले में आसाराम बापू, फलाहारी बाबा, गुरमीत राम रहीम, जलेबी बाबा आदि की यौन शोषण के आरोपों में गिरफ्तारी के बाद उन पर मुकद्दमे चल रहे हैं।

यह बुराई किसी एक धर्म तक सीमित न रह कर कैथोलिक ईसाइयों की सर्वोच्च धार्मिक पीठ 'बैटिकन' में भी व्याप्त है जिसके पादरियों पर समय-समय भी बच्चों और वयस्कों के यौन शोषण के आरोप लगते आ रहे हैं।

इसी कारण पोप फ्रांसिस ने चर्च में कई सुधारवादी कदम उठाने शुरु किए व 14 अक्तूबर, 2018 को पहली बार नाबालिगों के यौन शोषण के मामले में चिली के पूर्व आर्कबिशप 'फ्रांसिस्को' व पूर्व बिशप 'एंटीनियो' को पादरी पद से हटाने के आदेश किए। साथ ही उन्होंने कैथोलिक चर्च के कानूनों में संशोधन करके यौन शोषण के मामलों में कड़े दंड के नियम बनाए।

और अब पुर्तगाली कैथोलिक चर्च इसी तरह के एक कांड से हिल गया है। यह 6 सदस्यीय विशेषज्ञ पैनल ने 500 पन्नों की अपनी रिपोर्ट में बाल यौन शोषण के मामलों का खुलासा किया है।

पैनल के अनुसार अभी तक इसके सामने 512 पीड़ित आप बीती सुनाने आ चुके हैं जबकि 4815 से अधिक लोग बाल यौन शोषण के शिकार हो सकते हैं। कहा जाता है कि पुर्तगाली चर्च के वरिष्ठ अधिकारियों ने यह कह कर मामला दबाने की कोशिश की थी कि कुछ ही मामले सामने आए थे।

पैनल के अनुसार पुर्तगाल में कुछ धार्मिक संस्थान यौन शोषण के लिए 'असली ब्लैकस्पॉट' थे जहां यौन शोषण एवं दुर्व्यवहार के अधिकांश मामले पीड़ितों की किशोरावस्था में हुए। अधिकांश पीड़ित पुरुष तथा 47 प्रतिशत महिलाएं थीं। आरोपियों में 77 प्रतिशत पादरी तथा अन्य आरोपी चर्चा के विभिन्न संस्थानों से जुड़े हुए थे।

पैनल के अनुसार 77 प्रतिशत पीड़ितों ने अपने साथ दुर्व्यवहार की चर्च के अधिकारियों को सूचना नहीं दी व केवल 4 प्रतिशत ही पुलिस के पास गए।

पैनल की यह बैठक आयरलैंड व आस्ट्रेलिया में दुराचार के मामले पहली बार सामने आने के 30 से अधिक वर्षों व अमेरिका में सामने आने के 20 वर्ष बाद आयोजित की गई थी जब यूरोप के कई हिस्सों से बिशप व अन्य कैथोलिक वरिष्ठों ने या तो पादरी यौन शोषण के इस तथ्य से इंकार करना जारी रखा और या वे समस्या को कम करके बताने पर जोर दे रहे थे।

पुर्तगाली बिशप सम्मेलन के प्रमुख बिशप जोस ओरनेलस के अनुसार, ''हमने ऐसी चीजें देखीं और सुनी हैं जिन्हें हम नजरअंदाज नहीं कर सकते और इनसे पार पाना आसान नहीं होगा।''

पैनल पीड़ितों के नाम, दुर्व्यवहार करने वालों की पहचान या उन स्थानों को प्रकाशित नहीं कर रहा है जहां दुर्व्यवहार किया गया परन्तु इस पैनल द्वारा इस महीने के अंत तक बिशपों को उन दुराचारियों की सूची भेजनी हैं, जो अभी तक चर्च में सक्रिय हैं।

हालांकि चर्च में स्वीकारोक्ति (कनफैशन) का संस्कार है ताकि अपने बहन-भाइयों के विरुद्ध किए गए अपराधों के लिए क्षमा-याचना की जा सके परन्तु उक्त मामलों पर यह नियम लागू हो या नहीं, यह चर्चा का विषय हैं।

चर्च में यौन शोषण के आरोपों की कड़ी में यह नवीनतम है। अत: इस तरह की बुराइयां रोकने के लिए सभी धर्मों के ऐसे धर्मगुरुओं के खिलाफ कठोर कदम उठाने की जरूरत है।

कानून

अपने जिस्म की मिट्टी
खुर जाने के बाद भी
जिसे जाग नहीं आती
उसे मेरे देश में
'कानून' कहते है।

– अवतारजीत

तर्कशील सोसायटी हरियाणा की बैठक संपन्न

दिनांक 19-3-2023 को तर्कशील सोसायटी हरियाणा की एक बैठक स.प्रीतम सिंह मेमोरियल स्कूल बदसूई,ज़िला कैथल में आयोजित की गई। बैठक की अध्यक्षता तर्कशील पथ पत्रिका के संपादक बलवन्त सिंह द्वारा की गई। इस बैठक में तर्कशील सोसायटी हरियाणा की विभिन्न इकाईयों के प्रतिनिधियों के अलावा गूहला-चीका तहसील के आस पास के नये तर्कशील साथियों ने भी काफी संख्या में भाग लिया। इस बैठक में र्सवप्रथम वहां पर पहुँचे सभी प्रतिनिधियों का आपस में परिचय करवाया गया।

बैठक में मंच संचालन करते हुए सोसायटी के पूर्व प्रधान राजा राम हंडियाया ने हरियाणा में सोसायटी के गठन के इतिहास,दरपेश चुनौतियों के बारे में विस्तार से जानकारी प्रदान की। अपनी बात रखते हुए जिला कैथल इकाई के प्रधान कृष्ण राजौंद ने स्वयं को बेहद कम पढ़ा लिखा होने के बावजूद अपनी तर्कशील बनने की दास्तान का खुल कर जिक्र किया। पूण्डरी इकाई से साथी कृष्ण हलवाई ने शायराना अंदाज में महुए के पेड़ वाले चमत्कार का पर्दाफाश होते हुए देख कर अपने तर्कशील बन जाने का सफर का वर्णन किया। साथी धनपत सिंह धारसूल ने पत्रिका 'गदर की पैड़' का सोसायटी की इस बैठक में विमोचन करवाया। साथ ही उन्होंने बताया कि उन्होंने अपनी स्कूल शिक्षा में हिन्दी व अंग्रेजी भाषा का ज्ञान प्राप्त किया था। परन्तु पंजाबी एंव उर्दू भाषा को उन्होंने अपने घर पर ही अपनी इच्छा शक्ति के साथ सीखा हैं। मा.राकेश कुमार ट्रीमैन ने अपनी बात चीत में पेड़-पौधों के महत्व के बारे में जानकारी प्रदान की तथा साथ ही जादू के कुछ ट्रिक दिखा कर उनके पीछे के रहस्यों के बारे में बताया।

साथी हरबलास ने भी कुछ मैजिक ट्रिक दिखाए तथा उनकी वैज्ञानिक व्याख्या प्रस्तुत की। डा. कर्णदीप सिंह ने अपनी बात रखते हुए सुझाव दिया कि हमारे कार्यों में पूर्ण ईमानदारी एवं निष्ठा होने से ही हमें समाज में मान-सम्मान एवं प्रतिष्ठा प्राप्त हो सकती है

तर्कशील सोसायटी पंजाब के वरिष्ठ आगू एड-वोकेट हरिन्द्र लाली ने अंधविश्वास को रोकने के बारे में बने हुए कानूनों के बारे में काफी महत्वपूर्ण जानकारी प्रदान की। तर्कशील सोसायटी हरियाणा के प्रधान फरियाद सनियाणा ने अभी हाल ही में गांव डोबी जिला हिसार में ब्रेन पीडिया द्वारा तर्कशील सोसायटी की चुनौती को स्वीकार किये जाने के पश्चात् साधारण जनता एंव मौजिज़ लोगों के सामने गांव के स्कूल में ब्रेन पीडिया वालों की पोल खोलने का पूरा विवरण प्रस्तुत किया और साथ ही यह जानकारी भी दी कि सोसायटी की शर्तों को जीतने के लिये रखे गये नियम के अनुसार ब्रेन पीडिया वालों द्वारा ज़मानत के तौर पर जमा करवाए गये 10000/-(दस हज़ार) रूपये जब्त कर लिये गये। इसके साथ ही उस कार्यक्रम के लाईव प्रसारण को देख कर भारतीय मूल के अमरीक खडालिया वर्तमान में निवासी कैलिफोनिर्या (U.S.A) ने तर्कशील सोसायटी हरियाणा की गतिविधियों से प्रभावित हो कर सोसायटी को 10000/-(दस हज़ार) रूपये का सहयोग धनपत सिंह धारसूल के मार्फत से भेजा।

अपने अध्यक्षीय वक्तव्य में 'तर्कशील पथ' पत्रिका के संपादक बलवन्त सिंह लेक्चरार ने कहा कि अंधविशवास में पड़ कर लोग जानवरों का मूत्र भी खुशी-खुशी से पी जाते हैं। जब तक व्यक्ति के दिमाग में अंधविश्वास का कील गढ़ा हुआ हैं, तब तक वह वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपना ही नहीं सकता। इस कार्यक्रम की खास बात यह रही कि एडवोकेट हरिन्द्र लाली के नेतृत्व में राजा राम हंडियाया व राजेश पेगा के सहयोग के साथ मोटर-साईकिलों पर अपनी भारत, नेपाल एवं भूटान की यात्रा का हरियाणा में आरम्भ भी इसी स्थान से किया।

अन्त में गूहला-चीका इकाई के प्रधान एवं स्कूल के प्रिंसीपल गुरविन्द्र सिंह द्वारा इस कार्यक्रम में पहुँचे हुए तर्कशील साथियों का धन्यवाद किया गया। इस कार्यक्रम में भी लक्ष्मी आन्नद, राजेश बिन्द्रा,मान सिंह पूण्डरी आदि ने भी बैठक को संबोधित किया।

साथी गुरविन्द्र सिंह के स्कूल के स्टाफ सदस्यों ने इस कार्यक्रम के आयोजन मे विशेष तौर पर सहयोग दिया। आयोजकों द्वारा कार्यक्रम में सम्मिलित सभी सदस्यों के लिए चाय पान एंव भोजन इत्यादि की भी बेहतरीन व्यवस्था की गई थी।

रिपोर्ट-बलवन्त सिंह लेक्चरार

शहीदी दिवस को समर्पित स्मृति समारोह में तर्कशील कार्यक्रम की प्रस्तुति

23 मार्च 2023 को आल इंडिया लायर्स यूनियन (A.I.L.U) जिला कुरुक्षेत्र के द्वारा बार रूम कुरुक्षेत्र में शहीद भगत सिंह, राजगुरु एवं सुखदेव की शहादत को समर्पित एक स्मृति समारोह का आयोजन किया गया। इस कार्यक्रम में तर्कशील सोसायटी की ओर से 'तर्कशील-पथ' पत्रिका के संपादक बलवन्त सिंह लेक्चरार एवं. मां. राकेश कुमार ट्रीमैन के द्वारा 'चमत्कारों का पर्दाफाश' कार्यक्रम प्रस्तुत किया गया। इस प्रोग्राम में दोनों साथियों ने जादू के विभिन्न ट्रिक दिखा कर, बाद में उनके रहस्यों के बारे में समझा कर सभी प्रकार के चमत्कारों की पोल खोलने का कार्य किया।

जादू के ट्रिकों की व्याख्या करने के साथ-साथ तर्कशील आगू बलवन्त सिंह ने तर्कशील सोसायटी द्वारा दुनिया भर के देवपुरुषों, बाबाओं, ज्योतिषियों, मुल्ला-मौलवियों एवं पादरियों के सामने रखी 23 शर्तों की चुनौती वाली शर्तों के बारे में खुल कर बताया तथा सोसायटी के उद्देश्यों के बारे में विस्तारपूर्वक जानकारी दी।

तर्कशील साथियों ने आह्वान किया कि हम सभी को शहीद भगत सिंह के जीवन संघर्ष से प्रेरणा लेकर तथा वैज्ञानिक चिंतन को अपना कर सही अर्थों में भारतीय समाज को विज्ञान सम्मत एवं मानववादी समाज बनाने में अपना योगदान डालना चाहिए।

पापा की बरसी

हिमाँशू कुमार

पापा की दोनों आँखे सफेद गोली जैसी लग रही थीं। महिला डाक्टर ने पापा के शरीर से आंखे निकाल कर अपने साथ लाये डिब्बे में रख दीं। डाक्टर बोली कल तक आपके पापा की आंखे दो लोगों को लगा दीं जायेंगी। पापा का पूरा शरीर मेडिकल कालेज को दे दिया गया। कोई पंडित नहीं, कोई आडंबर नहीं, मां और बहनें पापा के देह प्रदान के फैसले से सहमत थीं। मंझली बहन का परिवार उत्तर प्रदेश का कर्मकांडी परिवार है, उन्होंने हल्के-फुल्के ढंग से बोला कि आत्मा की शान्ति नहीं होगी। मैनें उन्हें समझाया कि आत्मा,रूह वगैरह वहम हैं, 1942 में भारत छोड़ो आंदोलन में जब गांधी जी ने करो या मरो का नारा दिया, पापा ने मुजफ्फर नगर रेलवे स्टेशन को आग लगा दी। पुलिस ने छापा मारा, पापा फरार होकर आगरा, इलाहबाद और बनारस में भूमिगत रहे। गांधी जी को पत्र लिखा। गांधी जी ने पापा को सेवाग्राम आश्रम में अपने पास बुला लिया, गांधी जी ने पापा को नई तालीम के काम में लगाया। गांधी कहते थे जैसे आज़ाद भारत में अंग्रेजों का झन्ड़ा नहीं चल सकता, वैसे ही आज़ाद भारत में अंग्रेजी शिक्षा भी नहीं चल सकती। गांधी जी की हत्या के बाद पिता जी रचनात्मक कामों में लग गये, पापा नें नाम के आगे से जाति नाम उड़ा दिया। विनोबा भावे के भूदान और सर्वोदय आन्दोलन में पहली पंक्ति के कार्यकर्ता बने। प्रभावी लेखक, ओजस्वी वक्ता,विचारक,प्रखर कार्यकर्ता। सारे देंश में कोई ही इलाका होगा जहाँ पिता जी लोगों को ना जानते हों। वे चलता फिरता ज्ञानकोष थे। कोई भी प्रश्न हो, उत्तर हाज़िर। सुघड़ इतने कि आंख बन्द कर के भी अपना सामान उठा सकते थे, घर की सारी महिलायें रफू का काम पापा से करवाती थीं। उस ज़माने में वो जोरू का गुलाम कहलाते थे, क्योंकि मेरी सां के कपड़े धो देते थे, और थक जाने पर पत्नी के पांव भी दबा दाता थे। उत्तर प्रदेश में मंत्री पद मिला। ज़मीन बांटने का महकमा मिला। खुद भूमिहीन ही बने रहे, जीवन में अपना मकान नहीं बनाया, ना बैंक में कोई पैसा, एक चर्खा, कुछ अपना काता सूत। कुछ किताबें छोड़ कर पापा जिन्हें सब प्रकाश भाई के नाम से जानते थे, चले गये। मरने से पहले पापा बोल गये थे मरने के बाद मेडिकल कालेज में शरीर दे देना, पापा का अंतिम संस्कार नहीं किया गया।

अलविदा पापा

एक छोटा जीवनः एक बड़ा सबक



जीवन यात्रा में किए गए कर्मों को याद किया जाता है। कोई व्यक्ति कितने समय तक जीवित रहा, उसने अपने घर, परिवार के लिए क्या छोड़ा, इन सबसे ऊपर व्यक्ति की समाज को क्या देन होती है। वो हमेशा याद रहती है। जो दूसरों के लिए प्रेरणा और सबक बन जाता है। ऐसी ही एक मिसाल थी 39 दिन की एक बच्ची।

अमृतसर के एक अस्पताल में एक बच्ची का जन्म हुआ। पिता सुखबीर सिंह संधू व माता सुप्रीत कौर का आंगन खुशियों से भर गया। उन्होंने उसका नाम अबाबत कौर रखा। महज 24 दिन की उम्र में अबाबत को दिल का दौरा पड़ा। डॉक्टरों ने कहा कि बच्ची के दिमाग में खून नहीं पहुंच रहा है। आपात स्थिति में बालिका की जीवन सुरक्षा के लिए पीजीआइ ले कर गए। डॉक्टरों की लाख कोशिशों के बावजूद कुल 39 दिनों तक जीवित रह कर अबाबत की जीवन रेखा टूट गई। अपने कलेजे का एक टुकड़ा गंवाने के बाद भी माता-पिता ने हिम्मत नहीं हारी। उन्होंने अबाबत के अंगों को दान करने का फैसला किया, जिस पर पूरा परिवार राजी हो गया। अबाबत भारत के अब तक के सबसे कम उम्र के अंग प्रदान करने का गौरव प्राप्त कर गई। पीजीआई ने अबाबत की किडनी ने 16 साल के युवक की जान बचाई। अबाबत की किडनी एक ऐसे युवक में सफलतापूर्वक ट्रांसप्लांट कर दी गई थी, जिसकी दोनों किडनी फेल होने पर मरने के कगार पर था ।यह छोटे जीवन का बड़ा सबक है। जो अब्बात कौर के नेक माता-पिता के कारण ही संभव हो पाया है। यह प्रेरणा और सीख समाज की भलाई के लिए है।

बढ़ते कदम :

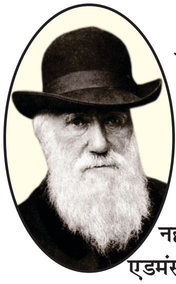
तर्कशील सोसायटी पंजाब द्वारा शुरू की गई छात्र चेतना परीक्षा इस बार विकासवादी सिद्धांत के जनक चार्ल्स डार्विन को समर्पित होगी। पिछली चार परीक्षाओं के मात्रात्मक परिणामों और माता-पिता, छात्रों, स्कूल प्रमुखों और तर्कशील कार्यकर्ताओं से प्राप्त प्रचुर समर्थन के कारण यह परीक्षा अगस्त 2023 में आयोजित की जाएगी। मई माह में परीक्षार्थियों को परीक्षा के लिए पाठ्यक्रम पुस्तिका वितरित कर दी जाएगी।

समाज के बेहतर भविष्य के लिए छात्रों को जीवन यात्रा में मार्गदर्शन देने के लिए चेतना परख परीक्षा के समर्थन की विनम्र अपील है।

कनाडा में तर्कशील नाटक मेला श्रृंखला :

30 अप्रैल 2023 ब्रैम्पटन	21 मई 2023 एब्सफोर्ड	04 जून 2023 कैलगरी	1 जून 2023 विन्निपेग	18 जून 2023 सरी

संपर्क : अवतार बाई : 604 728 7011, बलदेव रहिपा : 416 881 7202



मात्र 22 साल की उम्र में कप्तान रॉबर्ट फित्जरॉय के अवैतनिक सहायक के रूप में चार्ल्स रॉबर्ट डार्विन बीगल नाम के जहाज पर सवार हुए थे। यह जहाज सन् 1831 में दक्षिणी अमेरिका की तटरेखा के बहुविध अध्ययन के लिए दो साल के अभियान पर रवाना हो रहा था। अकादमिक योग्यता के नाम पर डार्विन के पास सिर्फ एक डिग्री धर्मशास्त्र की थी, जो कैंब्रिज विश्वविद्यालय द्वारा दो प्रोफेसरों की सहायता और सौजन्य से प्राप्त हुई थी। दरअसल धर्मशास्त्र की तरफ उन्हें खदेड़ा ही इसलिए गया था कि एडिनबर्ग विश्वविद्यालय में चिकित्साशास्त्र के अध्ययन में वे फिसड्डी साबित हुए थे।

उस जमाने की सर्जरी से-जो अपने उजड्डपने में जर्राही के ज्यादा करीब थी- कोई दिली नाता बिठा पाना डार्विन के बस का नहीं रहा। अलबत्ता एडिनबर्ग में अपने समय का सदुपयोग उन्होंने अमेरिका से मुक्त कराए गए अफ्रीकी मूल के गुलाम जॉन एडमंस्टन से जानवरों की खाल में भुस भरने और उन्हें दीवार पर टांगने की कला सीखने में किया। बीतती किशोरावस्था में एडमंस्टन का साथ डार्विन के लिए कई दूसरे मामलों में भी बड़े काम का साबित हुआ। एडमंस्टन ने उन्हें दक्षिणी अमेरिका के वर्षावनों (रेन फॉरेस्ट्स) से जुड़ी अद्भुत बातें बताईं और परंपरा से चली आ रही जो अफ्रीकी कहानियां उन्हें सुनाईं उससे पहली बार डार्विन के मन में धारणा बनी कि ऊपरी तौर पर बहुत अलग लगने के बावजूद अफ्रीकी और यूरोपीय मनुष्यों में कोई बुनियादी फर्क नहीं है।

चार्ल्स डार्विन की सोच और कर्म में आ रहे ये बदलाव उनके रौशनखयाल जमींदार और डॉक्टर पिता रॉबर्ट डार्विन को भटकाव जैसे लगे। पढ़ाई के बीच में ही एडिनबर्ग से उनका बोरिया-बिस्तर बांधकर धर्मशास्त्र के अध्ययन के लिए उन्हें कैंब्रिज रवाना करते हुए शायद उन्होंने सोचा होगा कि लड़का और कुछ नहीं तो चर्च की पुरोहिताई से ठीक-ठाक कमा खाएगा। लेकिन किस्मत कहें या बदकिस्मती कि डार्विन को धर्मशास्त्र पढ़ाने वाले प्रोफेसरों में भी दो आला दर्जे के वैज्ञानिक मिल गए! इन गुरुजन का नाम और संक्षिप्त परिचय- वनस्पतिशास्त्री जॉन स्टीवेंस हेंसलो और भूगर्भविज्ञानी एडम सेजविक। चिकित्साशास्त्र, वनस्पतिशास्त्र और भूगर्भविज्ञान-उस जमाने में एक प्रकृतिविज्ञानी (नेचुरलिस्ट) बनने के लिए यह एक दुर्लभ मणिकांचन योग था।

खासकर हेंसलो के साथ डार्विन की निकटता ज्यादा थी और उनकी सहायता से आखिरी दिनों में की गई पढ़ाई के बल पर उन्हें 1831 में हुई धर्मशास्त्र की अंतिम वर्ष की परीक्षा में 178 परीक्षार्थियों के बीच दसवां स्थान प्राप्त हो गया। फिर हेंसलो की अनुशंसा पर ही उन्हें अपने खर्चे पर कप्तान के सहायक के रूप में बीगल जहाज पर रवाना होने की इजाजत भी मिल गई। आपके मन में ज्ञान की आकांक्षा हिलोरें मार रही है। ज्ञान अर्जित करने की बुनियादी तकनीकें आपके पास हैं। जानने के लिए आपके सामने एक समूचा महाद्वीप खुला पड़ा है जिसे वैज्ञानिकों का तो दूर, कथित सभ्य दुनिया का सामान्य सान्निध्य भी बमुश्किल ही प्राप्त हुआ है। और सबसे बड़ी बात यह कि उमर आपकी 22 साल है, यह अभियान पांच साल लंबा खिंच गया। वे पशु-पक्षियों, पेड़-पौधों, जीवाश्मों और पत्थरों के नमूने इकट्ठा करते रहे, उनके मूल स्थान का रेखांकन करते रहे और अपने प्रेक्षणों के साथ लगातार उन्हें इंग्लैंड रवाना करते रहे। इंग्लैंड में हेंसलो और सेजविक से शुरू करके धीरे-धीरे पूरा वैज्ञानिक समाज उनके नमूनों के अध्ययन और विश्लेषण में जुट गया।

हालत यह हुई कि 1837 में डार्विन ने जब बीगल जहाज से उतरकर इंग्लैंड की धरती पर पांव रखा तो विज्ञान के लगभग हर क्षेत्र में उन्हें एक महत्वपूर्ण खोजी का दर्जा हासिल हो चुका था। दुनिया आज चार्ल्स डार्विन को जीवविज्ञान के आदिपुरुष की तरह देखती है लेकिन मात्र 27 साल की उम्र में पूरे हुए अपने लंबे अभियान के बाद जो पहली किताब उन्होंने लिखी वह भूगर्भशास्त्र पर थी।

ज्ञान की दुनिया को बुनियादी तौर पर बदल देने वाली उनकी किताब 'ऑन द ओरिजिन ऑफ स्पीसीज बाई मीन्स ऑफ नेचुरल सेलेक्शन ऑर द प्रिजर्वेशन ऑफ फेवर्ड रेसेज इन द स्ट्रगल फॉर लाइफ' (संक्षेप में 'ओरिजिन ऑफ स्पीसीज') लिखने में उन्होंने 22 साल और लिए, जो 22 नवंबर 1859 को प्रकाशित हुई। इस दौरान डार्विन के प्रेक्षण किसानों, नाविकों, जहाजियों, पशुपालकों, मालियों, शिकारियों आदि से उनकी सहज मैत्री के जरिए लगातार जारी रहे। अनजाने कारणों से उनके पूरे शरीर में खुजली होने लगती थी। वे बुरी तरह से पसीना-पसीना हो जाते और कभी-कभी मुंह से झाग भी निकलने लगता था। उनके लिए प्रकृति और जीवन से संबंध रखने वाला हर इन्सान किसी गंभीर वैज्ञानिक जितना ही महत्वपूर्ण हुआ करता था। अपनी इस प्रवृत्ति के चलते उन्होंने अपनी ममेरी बहन और भावी पत्नी को लगभग चौंका ही दिया था-जब तयशुदा कार्यक्रम के अनुसार उनसे शादी की बात चलाने के बजाय इवोल्यूशन डिस्कस करके घर चले आए थे! जीवविज्ञान की सदी, डार्विन की खास अपनी सदी तो अभी शुरू ही हुई है।

एक अर्से से दुनिया की बागडोर थामे बोदे और खतरनाक सियासी दिमागों ने डेढ़ सौ साल से भी ज्यादा वक्त 'सर्वाइवल ऑफ द फिटेस्ट' का सिद्धांत इन्सानों पर लागू करने की बेवकूफी में गुजार दिए, जबकि हर जाति का इन्सान डार्विन की सोच में सिर्फ एक इन्सान, एक खास जीवजाति भर था। अमेरिका के थैलीशाह आज भी डार्विन से इतना डरते हैं कि उनपर आयोजित प्रदर्शनियों को कोई प्रायोजक नहीं मिलता। जबकि पुरोहिताई चिंतन से संचालित डार्विन विरोधी 'क्रिएशनिस्ट' सिद्धांत के म्यूजियम को हर साल एक करोड़ डॉलर तक की सहायता प्राप्त हो जाया करती है!

If undelivered please return to :

Tarksheel

Tarksheel Bhawan, Tarksheel Chowk,
Sanghera By Pass, BARNALA-148101
Post Box No. 55
Cell. 98769 53561, 98728 74620
Web : www.tarksheel.org
e-mail : tarkshiloffice@gmail.com

BOOK POST
(Printed Matter)

To ....
....
....